चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 06 फरवरी– 12 फरवरी 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव

मायावती, अखिलेश प्रियंका और मोदी का अखाड़ा

फोटो : प्रभात पाण्डेय

संतोष भारतीय

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री अखिलेश यादव का बयान सामने आया है, जिसमें उन्होंने कहा है कि ये उत्तर प्रदेश का चुनाव नहीं, देश का चुनाव है. इसका सीधा अर्थ है कि जो उत्तर प्रदेश में जीतेगा, वो 2019 में केंद्र में सरकार बनाने में सफल होगा. अखिलेश यादव के इस बयान से उनके समर्थक सौ प्रतिशत सहमत होंगे और उसके आगे वे ये भी कहेंगे कि अब अखिलेश यादव नाम का एक नया चेहरा दिल्ली की गद्दी के लिए देश की राजनीति में सामने आ गया है. अखिलेश यादव से उलट उत्तर प्रदेश की भूतपूर्व मुख्यमंत्री और बंचितों की नेता मायावती इससे सिर्फ आंशिक रूप से सहमत होंगी. उनके समर्थक ये अवश्य कहना चाहेंगे कि उत्तर प्रदेश में उनकी सरकार बनेगी और वे ही 2017 से 2019 के केंद्र बिंदु में रहेंगी. कांग्रेस हिचकोले खाती हुई समाजवादी पार्टी के साथ गठबंधन में आई, लेकिन वे यह नहीं कह सकते कि उत्तर प्रदेश के चुनाव में उसकी कितनी बड़ी जीत होगी और वो दिल्ली की गद्दी के लिए कितनी दावेदार होगी. भारतीय जनता पार्टी इन सारे अनुमानों से परे जाकर अपने पूरे संसाधनों और संपूर्ण राजनीतिक क्षमता के साथ उत्तर प्रदेश के चुनाव को जीतना चाहेगी और जीतने के बाद वह 2019 में फिर से दिल्ली की गद्दी पर अपने संभावित कब्जे की घोषणा कर देगी.

इन चार पक्षों के अलावा अभी कोई पक्ष उत्तर प्रदेश में दिखाई नहीं देता है, न किसी दल के रूप में और न ही किसी गठबंधन के रूप में. चौथा गठबंधन अजीत सिंह, नीतीश कुमार, डॉ. अयूब और आर के चौधरी जैसों को बनाना था, लेकिन इसकी भ्रूण हत्या बहुत पहले हो गई और उसके ज़िम्मेदार इन चारों में से अधिकांश लोग हैं.

समाजवादी पार्टी का अंतर्विरोध

उत्तर प्रदेश के मुख्यतया तीन और थोड़े और विस्तार से देखें तो चार पक्ष हैं, जिनके अपने-अपने सकारात्मक पहलू भी हैं और अपने-अपने अंतर्विरोध भी हैं. सबसे पहले अखिलेश यादव की बात करते हैं. पिछले तीन महीने अखिलेश यादव और उनके पिता मुलायम सिंह यादव के बीच का तनाव पूरे उत्तर प्रदेश ही नहीं सारे देश को अपने में बांधे रहा. तीन महीने चला ये घटनाक्रम किसी भी टेलीविजन सीरियल से कम रोचक नहीं था. इसमें षड्यंत्र थे, सौतेली माताएं थीं, सास-बहुएं थीं, चाचाओं के अपने-अपने दांव थे. कुल मिलाकर राजमहल के भीतर चलने वाले षड्यंत्र का आधुनिक स्वरूप नमक, मिर्च, घात-प्रतिघात के रूप में हमारे सामने था और सारे देश ने इसमें भरपूर रूचि दिखाई. सबसे आखिरी के घटनाक्रम में अखिलेश यादव ने अपने पिता को अपनी चतुराई और अपने बुद्धिबल से समाजवादी पार्टी की गद्दी से उतार दिया. लेकिन कभी ये नहीं कहा कि वे उन्हें उतारना चाहते हैं. अखिलेश ने उन्हें मार्गदर्शक के रूप में सामने रखते हुए उनके सारे अधिकार छीन लिए. इस क्रम में अखिलेश के चाचा प्रोफेसर रामगोपाल यादव मुख्य रणनीतिकार के रूप में उभरे. रामगोपाल यादव ने पिछले 15-20 सालों में अपने बड़े भाई मुलायम सिंह यादव के रणनीतिकार की सकुशल भूमिका निभाई थी. दिल्ली सहित पूरे देश में यह माना जाता था कि मुलायम सिंह वही फैसला लेंगे जो प्रोफेसर रामगोपाल कहेंगे, क्योंकि मुलायम सिंह ने स्थितियों का विश्लेषण करने और लोगों से बातचीत करने की पूरी ज़िम्मेदारी प्रोफेसर रामगोपाल को सौंप रखी थी. इसकी पराकाष्ठा दो साल पहले सप्रमाण देखने को मिली, जब देवेगौड़ा, नीतीश कुमार, लालू यादव, शरद यादव, अभय चौटाला और कमल मोरारका ने एक पार्टी बनाने की कोशिश की. सबने मिलकर मुलायम सिंह यादव को नई पार्टी का अध्यक्ष, पार्लियामेन्ट्री बोर्ड का अध्यक्ष मान लिया और उनके चुनाव चिन्ह और उनकी पार्टी के नाम पर सहमती जता दी. प्रेस के सामने उन्हें मालाएं पहना दी गईं और मुलायम सिंह ने उसे स्वीकार भी कर लिया. लेकिन इसके ठीक डेढ़ महीने के भीतर बिहार चुनाव में इस फैसले की धज्जियां उड़ गईं. प्रोफेसर रामगोपाल ने ये घोषणा की कि वह बिहार में अलग चुनाव लड़ेंगे. दरअसल, जब मुलायम सिंह यादव को एक पार्टी का नेता मानने की बात हुई और जब लालू यादव और नीतीश कुमार ने कहा कि अब मुलायम सिंह को आगे बढ़ना चाहिए, तो उनकी तरफ से कहा गया कि एक पार्टी बनाने की प्रक्रिया बिहार चुनाव के बाद शुरू करेंगे. इस वाकये ने लालू यादव और नीतीश कुमार को ये संदेश भेजा कि बिहार चुनाव के जो परिणाम आएंगे, उसके बाद हम सब नई पार्टी की घोषणा करेंगे. इसलिए उन्होंने अपने प्रत्याशियों की घोषणा कर दी, जिसे प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने अपने लिए हानिकारक माना और ये समझा कि शायद नई पार्टी में राजनीतिक फैसले लेने का अधिकार बहुत से दूसरे लोगों के पास जा सकता है और अचानक इस पार्टी को सुशुप्तावस्था में रखने की योजना बनी. हालांकि कहा ये गया कि भारतीय जनता पार्टी के इशारे पर प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने एक पार्टी बनाने की योजना को सिरे नहीं चढ़ने दिया, क्योंकि अगर एक पार्टी बन जाती तो भारतीय जनता पार्टी का मानना था कि बिहार में हर हालत में वो पार्टी जीतती. इस चर्चा की वास्तविकता का कोई प्रमाण किसी के पास नहीं है. लेकिन सारे संबंधित पक्षों और राजनीतिक जानकारों के बीच ये चर्चा इतनी मज़बूती से उभरी कि प्रोफेसर रामगोपाल यादव नई पार्टी बनाने के रास्ते के प्रमुख खलनायक बन गए. इसके पक्ष में सिर्फ एक ही बात कही जा सकती है कि जब मुख्यमंत्री के परिवार का झगड़ा और आगे बढ़ा, तो पहले शिवपाल सिंह यादव ने सार्वजनिक रूप से और फिर स्वयं मुलायम सिंह यादव ने सार्वजनिक रूप से कहा कि प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने सीबीआई से बचने के लिए और भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में रणनीति बनाने के लिए सारी समस्याएं पैदा की और उन्होंने ही परिवार में विभाजन करा दिया. सिर्फ यही दो बयान उस चर्चा के प्रमाण में हमारे सामने हैं.

हो सकता है, ये सही न हो लेकिन अखिलेश यादव द्वारा मुलायम सिंह यादव को बिल्कुल किनारे कर देना, हाशिये पर डाल देना उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत स्वीकारा नहीं गया और न पसन्द किया गया. 50 साल से ऊपर के लोग इस फैसले के खिलाफ़ दिखाई दे रहे हैं. लेकिन 50 प्रतिशत वो हैं जिन्हें हम नौजवान कह सकते हैं, जो इस मानसिकता के हैं कि अखिलेश के पिता ने उनके लिए कुछ नहीं किया, वे अच्छा कर सकते थे. ऐसी समझ वाले युवा इस फैसले के पक्ष में हैं. अखिलेश यादव के चुनाव कैंपेन में पहला रोड़ा यही सवाल बनने वाला है कि उन्होंने

(शेष पृष्ठ 2 पर)

भारतीय जनता पार्टी से जुड़े राष्ट्रीय स्वयं सेवक के मनमोहन वैद्य ने बहुत सोच समझ कर बयान दिया है कि आरक्षण भेद-भाव को बढ़ाता है और वो आरक्षण नहीं चाहते हैं. यह बयान बेख्याली में दिया हुआ नहीं है. यह बयान राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और भारतीय जनता पार्टी की उस सोच को बताता है, जिसमें कॉमन सिविल कोड है, आर्टिकल 370 की समाप्ति है और मुसलमानों को अपीज (तुष्ट) न किया जाए यह भी शामिल है. उन्हें लगता है कि उत्तर प्रदेश में वे हर हालत में चुनाव जीत सकते हैं, क्योंकि यहां हिंदुओं की संख्या ज्यादा है. अगर वे चुनाव जीतते हैं, तो बचे हुए दो साल में वे अपने विचार के अनुसार सारे देश में अपने फैसलों को लागू कर सकते हैं. शायद, इसीलिए अखिलेश यादव ने कहा कि उत्तर प्रदेश का चुनाव दरअसल 2019 का दिल्ली का चुनाव है. उनके इस वाक्य का विरोध न मायावती जी ने किया है, न कांग्रेस ने किया है और न भारतीय जनता पार्टी ने किया है. देखते हैं, ये चुनाव किनके चेहरे पर मुखौटे लगाता है, किनके चेहरे के मुखौटे उतारता है.

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव

मायावती, अखिलेश, प्रियंका और मोदी का अखाड़ा

पृष्ठ 1 का शेष

अपने 5 साल के मुख्यमंत्रित्व काल के बाद ही कैसे अपने पिता को अपमानित कर एक किनारे धकेल दिया और किस तरह से उनकी उस सारी मेहनत को मटियामेट कर दिया, जो उन्होंने पिछले 40 साल में समाजवादी पार्टी को इस ऊंचाई पर पहुंचाने के लिए की थी.

अखिलेश यादव के लिए दूसरी चुनौती मुलायम सिंह यादव का आखिरी बयान बन रहा है, जिसमें उन्होंने कहा है कि अखिलेश यादव मुस्लिम विरोधी हैं. उन्होंने पांच साल अखिलेश यादव को बहुत सारी सलाहें दीं, जो उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित थीं, जिन्हें मुलायम सिंह यादव अपना मुख्य वोट मानते हैं. दूसरी तरह की सलाहें मुसलमानों को लेकर थीं, उनके उत्थान को लेकर थीं. लेकिन अखिलेश यादव ने दोनों के ऊपर ध्यान नहीं दिया. मुलायम सिंह यादव के इस चेतावनी भरे मार्मिक वक्तव्य कि अखिलेश मुसलमान विरोधी हैं, का इस्तेमाल मायावती और भाजपा भी करेगी. इन दो अड़चनों के अलावा अखिलेश यादव के सामने उत्तर प्रदेश में कोई अड़चन नहीं है. अगर कोई अड़चन है तो उनके द्वारा किए गए काम हैं, जिनके बारे में ये चुनाव फैसला करेगा कि वो काम शहरों में रहने वाले लोगों के लिए किए गए या गांवों में रहने वाले लोगों के लिए किए गए. यह चुनाव ये भी फैसला करेगा कि गांवों में किए गए कामों को उत्तर प्रदेश का ग्रामीण क्षेत्र कितना अपना मानता है या स्वभाविक रूप से किए गए विकास को एक विलक्षण विकास मानता है. जब अखिलेश यादव मुख्यमंत्री बने, तो देश में एक आशा बंधी थी कि एक नौजवान मुख्यमंत्री जिस तरह से काम करेगा उसी प्रकार की छवि देश में नौजवानों की बनेगी. दूसरी तरफ भारतीय जनता पार्टी के पास न नौजवान मुख्यमंत्री है, न नौजवान पार्टी अध्यक्ष है न किसी प्रदेश में कोई नौजवन मुख्यमंत्री का चेहरा है, दूसरी तरफ अखिलेश यादव का नौजवान चेहरा है. अगर अखिलेश यादव इस चुनाव में सरकार नहीं बना पाते हैं, तो ये सिर्फ अखिलेश यादव के लिए ही घातक नहीं होगा, देश के नौजवानों को सर्वोच्च पद देने के सिद्धांत पर भी सवालिया निशान खड़ा हो जाएगा, क्योंकि प्रदेश, प्रदेश की समस्याएं, प्रदेश का विकास दूसरे शब्दों में देश की समस्याएं, देश का विकास क्या नौजवान को सौंपा जा सकता है या नहीं सौंपा जा सकता है, इस सिद्धांत के ऊपर नई बहसें शुरू हो जाएंगी.

बसपा के सकारात्मक पहलू

मायावती की बात करें, तो सबसे पहले संभावित उम्मीदवारों को टिकट देने के अलावा उनकी पार्टी में विद्रोह न होना भी उनके पक्ष में जाता है. उनकी पार्टी से दो बड़े नेता निकले, स्वामी प्रसाद मौर्य और आर के चौधरी. स्वामी प्रसाद मौर्य को भारतीय जनता पार्टी ने 30 टिकटों का आश्वासन दिया था, लेकिन उन्हें 3 पर समेट दिया. दूसरी तरफ आरके चौधरी को टिकट दी गई, लेकिन इससे मायावती के समर्थकों में कोई विद्रोह हुआ हो, कोई चर्चा हुई हो, कोई गुस्सा हुआ हो, ऐसा नहीं दिखाई नहीं दिया. इतना ही नहीं, मायावती ने जिन्हें टिकट दी, उनके प्रतिद्वंदी भी उनके खिलाफ कोई माहौल नहीं बना पाए. मायावती का दूसरा व्यक्तित्व का एक पहलू है कि पिछले पूरे पांच साल उन्होंने लखनऊ और दिल्ली में रहकर ख़ामोशी से गुज़ार दिए. उन्होंने अखिलेश यादव की सरकार के खिलाफ न ज्यादा वक्तव्य दिया, न कोई आन्दोलन किया, न उनकी कमियों को उजागर किया. यदा-कदा वह कभी बोल देती थीं, पर वो कैंपेन की शक्ल में नहीं होता था. अब जब चुनाव नज़दीक आए हैं, तो मायावती ने अपने सधे हुए अंदाज़ में न केवल मुस्लिम समाज को ज्यादा सीटें दीं, बल्कि उन्होंने मुस्लिम समाज को एडेस करना भी शुरू किया और कहा कि अगर मुसलमान बसपा का समर्थन करते हैं, तो निश्चित रूप से भारतीय जनता पार्टी को उत्तर प्रदेश में हराया जा सकता है. उनके कैंपेन की ये लाइनें मुसलमानों को उनकी तरफ खींच रही हैं. मुस्लिम समाज आख़िर में किसे वोट देगा, कहा नहीं जा सकता, क्योंकि सपा और कांग्रेस का या अखिलेश और प्रियंका गांधी का गठबंधन मुसलमानों को एकतरफा फैसला लेने में शायद थोड़ी परेशानी पैदा करेगा. लेकिन उत्तर प्रदेश चुनावों में जाने-अनजाने मुस्लिम समाज बहुत बड़ा फैक्टर बन गया है, इसलिए अगर मुस्लिम समाज बीएसपी के साथ जाता है, जिसे साथ आने का खुला आमंत्रण मायावती ने दिया है, तो उत्तर प्रदेश चुनाव का फैसला अखिलेश और भारतीय जनता पार्टी की इच्छाओं के विपरीत भी हो सकता है.

कांग्रेस की उम्मीद प्रियंका गांधी

कांग्रेस उत्तर प्रदेश में सबसे ख़राब हालत में है. कांग्रेस की पूरी रणनीति राहुल गांधी के दिशा-निर्देश में चली और पिछले पूरे पांच साल कांग्रेस ने अखिलेश यादव की सरकार का विरोध किया. राहुल गांधी की उत्तर प्रदेश में जितनी यात्राएं हुईं, उनमें अखिलेश विरोध प्रमुख था और उनकी खाट यात्राओं में भी अखिलेश यादव का विरोध था. हालांकि एक जगह उन्होंने अखिलेश यादव की तारीफ़ भी की, शायद उस समय उन्हें लगा होगा कि मैं सार्वजनिक रूप से तारीफ़ कर अखिलेश के साथ गठबंधन कर सकता हूं. राहुल गांधी को ये समझाया गया कि अगर वो अखिलेश यादव के साथ गठबंधन करते हैं, तो मुसलमान मायावती के साथ नहीं जाएगा. फिर अखिलेश यादव और कांग्रेस मिलकर उत्तर प्रदेश की 300 सीटों पर क़ब्ज़ा कर लेंगे. जिसकी कई बार घोषणा स्वयं अखिलेश यादव ने की. कांग्रेस का नुक़सान ये हुआ कि पांच साल तक वह जिस रणनीति पर चल रही थी, उसके अनुसार कांग्रेस के 400 उम्मीदवार विधानसभा के लिए खड़े होते और पार्टी का जनाधार बढ़ाते. शुरू में कांग्रेस के रणनीतिक सलाहकार प्रशांत किशोर ने भी यही लाइन ली थी और उन्होंने राहुल गांधी की रैली भी यही कहकर करवाई थी कि जो उम्मीदवार जितने ज्यादा लोगों को राहुल गांधी की रैली में लाएंगे, वो उनका आंकलन करवाएंगे, उनके समर्थकों की संख्या गिनवाएंगे और उसके हिसाब से टिकट का फैसला करेंगे. पहली बार राहुल गांधी की बड़ी रैली लखनऊ में हुई, जिसमें टिकट के दावेदार 400 चुनाव क्षेत्रों से बसें भर-भर लोगों को ले लाए. लेकिन जैसे ही ये घोषणा हुई कि अब अखिलेश यादव के साथ कांग्रेस का गठबंधन होगा, कांग्रेस के वे कार्यकर्ता निराश हो गए और घर पर बैठ गए, जो चुनाव लड़ने के लिए अपना जी-जान लगा रहे थे, अपना पैसा लगा रहे थे. अब देखना ये है कि जो 105 सीटें कांग्रेस को मिली हैं, उनमें से कांग्रेस कितनी सीटें जीतती है. दिल्ली की भूतपूर्व मुख्यमंत्री शीला दीक्षित का आंकलन है कि कांग्रेस को 70 सीटें जीतनी चाहिए. जबकि निस्पक्ष

कांग्रेस का नुक़सान ये हुआ कि पांच साल तक वह जिस रणनीति पर चल रही थी, उसके अनुसार कांग्रेस के 400 उम्मीदवार विधानसभा के लिए खड़े होते और पार्टी का जनाधार बढ़ाते. शुरू में कांग्रेस के रणनीतिक सलाहकार प्रशांत किशोर ने भी यही लाइन ली थी और उन्होंने राहुल गांधी की रैली भी यही कहकर करवाई थी कि जो उम्मीदवार जितने ज्यादा लोगों को राहुल गांधी की रैली में लाएंगे, वो उनका आंकलन करवाएंगे, उनके समर्थकों की संख्या गिनवाएंगे और उसके हिसाब से टिकट का फैसला करेंगे.

विवेचकों का मानना है कि कांग्रेस अगर 45 और 50 सीटें जीत जाए तो उसके खाते में बहुत होगा. लेकिन एक तीसरा पक्ष भी है, जो ये मानता है कि कांग्रेस और अखिलेश यादव के गठबंधन से कांग्रेस को ज्यादा फायदा होगा, अखिलेश यादव की सीटें घटेंगी. इसका अभी कोई तर्क नहीं है, लेकिन तर्क ये है कि गांवों में जो अतंर्विरोध हैं और जो भावना अखिलेश यादव के हाल के क्रियाकलापों के ऊपर लोगों में बनी है, अगर वो अगले 15 दिनों में समाप्त नहीं हुई, तो लोगों का ये सोचना सही साबित हो जाएगा कि कांग्रेस तो इस गठबंधन से फायदा उठा जाएगी, लेकिन अखिलेश को इससे नुक़सान होगा. इस तरह का एक उदाहरण पश्चिम बंगाल के रूप में हमारे सामने है, जहां कांग्रेस के सीटों की संख्या बढ़ गई और उनके सहयोगी वामपंथियों के सीटों की संख्या कम हो गई, जबकि कांग्रेस का कोई जनाधार पश्चिम बंगाल में नहीं था. कांग्रेस ने एक बड़ा काम प्रियंका गांधी को चुनाव मैदान में उतारकर किया है. उनके कैंपेन की योजना डिंपल यादव के साथ बन रही है और उत्तर प्रदेश में कम से कम 6 या 8 सभाएं दोनों मिलकर करेंगी. प्रियंका गांधी का अपना अंदाज़ है और वो लोगों के साथ अपने को कनेक्ट कर लेती हैं. लोग भी उनकी सभाओं में अपनी उपस्थिति दर्ज कराएंगे. प्रियंका गांधी के चुनाव प्रचार में उतरने के बाद जो नौजवान कांग्रेस के साथ खड़े होंगे, वे अखिलेश के समर्थक नौजवानों के साथ मिलकर वोटों के ऊपर खासा असर डालेंगे. कांग्रेस के भीतर उत्तर प्रदेश के चुनावों में दिल्ली की गद्दी का भी एक अंडर करेंट दिखाई देगा कि उत्तर प्रदेश के चुनावों के बाद राहुल गांधी कांग्रेस का चेहरा बनेंगे या प्रियंका गांधी. मेरा मानना है कि अगर शीला दीक्षित का आंकलन सही होता है, तो प्रियंका गांधी दिल्ली का चेहरा बनेंगी और अगर स्वतंत्र समीक्षकों का अंदाजा सही साबित होता है कि कांग्रेस 45-50 सीटों पर रह जाएगी, तो राहुल गांधी ही दिल्ली के लिए कांग्रेस का चेहरा बनेंगे. कांग्रेस ने प्रियंका गांधी को यूपी के चुनावों में उतारकर एक बड़ा जुआ खेला है. कांग्रेस के लोग विश्वास कर रहे हैं कि वो इस बाज़ी को ज़रूर जीतेंगे.

(शेष पृष्ठ 3 पर)

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 08 अंक 49
06 फरवरी- 12 फरवरी 2017

RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

संपादक समन्वय
डॉ. मनीष कुमार

एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)

सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोनः 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-6451999
6450888
विज्ञापन व प्रसार 022-65500786
+91-8451050786
+91-9266627379
फैक्स न. 0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर कानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव

मायावती, अखिलेश, प्रियंका और मोदी का अखाड़ा

पृष्ठ 2 का शेष

भाजपा के पास संसाधन है, चेहरा नहीं

भारतीय जनता पार्टी के पास धन है, संगठन है, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे समझदार और ख़तरनाक लोगों का समूह है, जो हर पोलिंग बूथ पर खड़े हो सकते हैं, शहरों और गांवों में हवा बना सकते है. लेकिन भारतीय जनता पार्टी के पास मुख्यमंत्री पद का कोई चेहरा नहीं है.

भारतीय जनता पार्टी के भीतर एक बड़ी चर्चा है कि रेल राज्य मंत्री मनोज सिन्हा उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री के चेहरे के रूप में भाजपा को फायदा पहुंचा सकते हैं. दूसरा नाम केंद्रीय पर्यटन मंत्री महेश शर्मा का है. मुख्यमंत्री पद की दौड़ में तीसरा नाम राजनाथ सिंह का है, जो स्वयं मुख्यमंत्री नहीं बनना चाहते. लेकिन सांसद योगी आदित्यनाथ, जो मुख्यमंत्री बनना चाहते है, उन्हें भाजपा मुख्यमंत्री उम्मीदवार के रूप में पेश नहीं करना चाहती. अगर भाजपा आदित्यनाथ को चुनाव के कैंपेन से दूर रखती है, या उनसे कहती है कि वे बाद में मुख्यमंत्री बन सकते हैं, तो योगी आदित्यनाथ की हिंदू रक्षा वाहिनी, जो पूर्वांचल के 20-22 जिलों में सबसे सशक्त संगठन है, वह भाजपा का उस तरह से साथ नहीं देगा, जिस तरह से 2014 के लोक सभा चुनाव में दिया था. अगर यह संगठन भारतीय जनता पार्टी का समर्थन नहीं करता है, तब चुनाव को लेकर भाजपा की संभावनाएं थोड़ी सी कमजोर हो जाती है. भारतीय जनता पार्टी ने हर चुनाव क्षेत्र के लिए 6 मोटरसाइकिल, 12 पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं के हिसाब से दिए हैं, ताकि गांव-गांव पहुंच कर भाजपा का प्रचार किया जाए. कुल मिलाकर ये 2400 के करीब मोटरसाइकिलें होती हैं और अगर वेतन समेत उनके कार्यकर्ताओं का खर्च जोड़ लिया जाए, तो यह एक बहुत बड़ा खर्च हो जाता है. इस चुनाव में भारतीय जनता पार्टी अकेली ऐसी पार्टी है, जिसने हर चुनाव क्षेत्र में 6 मोटरसाइकिलें और लगभग 800 छोटे रथ प्रचार के लिए भेजे हुए है. भारतीय जनता पार्टी ने एक बार फिर राम मंदिर बनाने की बात का प्रचार करने के लिए टोलियों का गठन किया है. भाजपा बिल्कुल इस दुविधा में नहीं है कि उसे मुसलमानों का वोट मिलेगा या नहीं मिलेगा. उसका मानना है कि उसे मुसलमानों का वोट नहीं मिलेगा. इसलिए वह अब इस चुनाव को मंदिर बनाम मस्जिद में बदलना चाहती है. इसमें संघ उसका साथ देगा. लेकिन जिस तरह से भाजपा ने विधान सभा चुनाव में हर उस व्यक्ति को टिकट दिया है, जो दूसरी पार्टी छोड़ के आया है, चाहे वो समाजवादी पार्टी हो, बसपा हो या फिर कांग्रेस हो, उससे लगता है कि संघ की पकड़ अब भारतीय जनता पार्टी के ऊपर नहीं रही और भाजपा विशुद्ध रूप से कांग्रेस की रणनीति के ऊपर चुनाव लड़ना और जीतना चाहती है.

भारतीय जनता पार्टी की कमजोरी के कई उदाहरण सामने आए हैं. पहला उदाहरण आर के चौधरी का है, जो बसपा से निकले, भारतीय जनता पार्टी में शामिल भी नहीं हुए, एनडीए का सदस्य भी नहीं बने, लेकिन उन्हें भाजपा ने टिकट दे दिया. उन्हें इसलिए टिकट दिया गया क्योंकि भाजपा को लगा कि सांसद कौशल किशोर पासियों के नेता हैं, उनका मुकाबला करने के लिए या उनसे बचे हुए पासियों को अपनी तरफ लाने के लिए आर के चौधरी की जरूरत है. हालांकि, आर के चौधरी और कौशल किशोर की आपस में नहीं बनती है, लेकिन जहां एक तरफ कौशल किशोर की पत्नी को विधानसभा चुनाव का टिकट दिया गया, वहीं आर के चौधरी को बिना पार्टी में शामिल किए विधानसभा का टिकट दे दिया गया. ये बताता है कि भारतीय जनता पार्टी चुनाव क्षेत्र में अपने को कहीं कमजोर पा रही है. नारायण दत्त तिवारी का समर्थन भारतीय जनता पार्टी ने पहाड़ के ब्राह्मणों का समर्थन अपनी तरफ करने के लिए लिया. नारायण दत्त तिवारी भी अपने पुत्र के लिए अमित शाह के घर पहुंच गए. उन्होंने यह बता भी दिया कि अब सिद्धांत की राजनीति नहीं, सत्ता की राजनीति ही चलने वाली है. शायद इसीलिए, जितनी पार्टियां उत्तर प्रदेश में चुनाव लड़ रही हैं, वो एक ही सिद्धांत को मुख्य मान रही हैं और वो है सत्ता, किसी भी तरह सत्ता हासिल करना. जब किसी भी तरह सत्ता की बात आ जाय, फिर वो गरीबों के लिए नहीं होती है, वो ठेकेदारों के लिए होती है, पार्टी के लोगों के लिए होती है, ब्यूरोक्रेट्स के लिए होती है और अपने रिश्तेदारों के लिए होती है.

मुसलमान क्या करेंगे

अखिलेश यादव और कांग्रेस के बीच गठबंधन पर 15-20 दिनों तक चली बहस ने मुश्किलें खड़ी कर दी है और मुश्किल पश्चिमी उत्तर प्रदेश की है. यहां पर मुसलमानों ने बैठक कर के यह तय किया था, यद्यपि जाटों ने मुजफ्फरनगर में उनके समाज के साथ अन्याय किया है, लेकिन वे जाटों के इस अन्याय को भूल कर, भारतीय जनता पार्टी के बड़े खतरे को देखते हुए इस गठबंधन के पक्ष में वोट करेंगे. यानी जाट और मुसलमान एक साथ मिल कर अखिलेश यादव और प्रियंका गांधी के लिए वोट करते. लेकिन, अखिलेश यादव ने राष्ट्रीय लोकदल यानी अजित सिंह के साथ जिस तरीके से गठबंधन न होने देने की रणनीति बनाई वो जाटों को अपमानित कर गई. पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पहले समाजवादी पार्टी के साथ राष्ट्रीय लोक दल के गठबंधन की बातचीत चली. बाद में समाजवादी पार्टी ने कहा कि अगर गठबंधन करना है, तो कांग्रेस अपनी सीटों में से राष्ट्रीय लोक दल को सीटें दे. यह कहने के साथ ही सपा ने उन प्रमुख सीटों पर अपने उम्मीदवार उतार दिए, जहां से अजित सिंह के अपने लोग खड़े होते और जो अजित सिंह का घर था, जैसे छपरौली, बागपत. इसने अजित सिंह को ही नहीं बल्कि जाट बिरादरी को भी अपमानित किया. अखिलेश यादव के लिए अजित सिंह का साथ न होना, इस चुनाव में पश्चिमी उत्तर प्रदेश में बहुत परेशानी पैदा कर सकता है. अब पश्चिमी उत्तर प्रदेश में मायावती और मुस्लिम गठबंधन, भारतीय जनता पार्टी के गठबंधन के सामने सीना तान कर खडा है.

नीतीश कुमार ने उत्तर प्रदेश में 8 सफल सभाएं की और उत्तर प्रदेश के उन लोगों को, जो भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस या कहीं पर मायावती और समाजवादी पार्टी से भी अलग थे, उन्हें एक आशा की किरण दी कि नीतीश कुमार के बहाने उन्हें चुनाव में कोई रोल प्ले करने का मौका मिल जाएगा. उत्तर प्रदेश में कुर्मी समाज है, जो आज तक कभी सत्ता में नहीं रहा, उसने नीतीश कुमार के साथ मजबूती से खड़े हो कर यह बता दिया कि अगर नीतीश कुमार अपने उम्मीदवार खड़े करते हैं, या वे किसी गठबंधन में जाते हैं, तो यह समाज नीतीश कुमार के साथ उस गठबंधन को जिताने में बहुत सहायक साबित होगा. लेकिन, नीतीश कुमार को न मायावती ने पूछा, न अखिलेश यादव ने. नीतीश कुमार तक, उनके दिल्ली के मित्रों के जरिए ये खबर पहुंचाई गई, कि अगर वे दो सीटों पर चुनाव लड़ना चाहते हैं, तो समाजवादी पार्टी उन्हें गठबंधन में लेने को तैयार है. यह प्रोफेसर रामगोपाल यादव का मास्टर स्ट्रोक था कि जब इन्होंने बिहार में हमें पांच सीटें प्रस्तावित की थी, तो हम इन्हें दो सीट अपनी तरफ से प्रस्तावित करें. नीतीश कुमार 20 से 25 सीटों पर काफी असरकारी साबित हो सकते थे, लेकिन अंत में उन्होंने फैसला किया कि वे उत्तर प्रदेश में चुनाव नहीं लड़ेंगे, क्योंकि इससे सेकुलर वोटों का बंटवारा हो सकता है. नीतीश कुमार के चुनाव न लड़ने से भारतीय जनता पार्टी मजबूत हुई है. कुर्मी समाज शुरू से भारतीय जनता पार्टी के साथ रहा है. अब, अगर नीतीश कुमार चुनाव नहीं लड़ेंगे, तो पूरा का पूरा कुर्मी समाज भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में जाएगा और वो अखिलेश यादव और मायावती के लिए नुकसानदेह साबित हो सकता है. कुल मिला कर उत्तर प्रदेश के चुनाव में नीतीश कुमार का और लालू यादव का कोई रोल नहीं है. लालू यादव पहले ही चुनाव न लड़ने की घोषणा कर चुके हैं और अब नीतीश कुमार ने लालू यादव के उस वक्तव्य का सहारा ले कर कहा है कि हम लालू यादव की सलाह पर सेकुलर वोटों को न बंटने देने के लिए चुनाव नहीं लड़ेंगे.

मोटे तौर पर हम कह सकते है कि उत्तर प्रदेश चुनाव में ये किसी के भी पक्ष में जाने वाले अंतर्विरोध हैं. लेकिन, अगर हम इन्हें ध्यान से देखें, तो ये अंतर्विरोध सबसे ज्यादा भारतीय जनता पार्टी को नुकसान पहुंचाएंगे, फिर अखिलेश यादव को नुक़सान पहुंचाएंगे और फिर मायावती को नुक़सान पहुंचाएंगे. लेकिन इनका सबसे ज्यादा फायदा मिलेगा कांग्रेस को. अब, इस स्थिति में किसके पक्ष में उत्तर प्रदेश की बाजी आती है, वो फैसला आने के बाद ही तय होगा. लेकिन, लगता ये है कि जिन दो पक्षों के बीच में मुख्य लड़ाई होगी, उनमें एक पक्ष मायावती जी का है. दूसरे पक्ष में भारतीय जनता पार्टी आती है या अखिलेश यादव आते हैं, ये चुनाव का आखिरी सप्ताह बताएगा.

सबसे आखिर में, उत्तर प्रदेश का मुस्लिम समाज पशोपेश में है. मुस्लिम समाज के लिए भारतीय जनता पार्टी ने कोई वादा नहीं किया है. मुस्लिम समाज के लिए पिछले 5 साल में उत्तर प्रदेश की सरकार ने भी कोई बहुत ज्यादा काम नहीं किया है. अभी का चुनावी घोषणा पत्र भी उत्तर प्रदेश के मुसलमानों के पक्ष में कोई ठोस बात नहीं कर रहा. 90 प्रतिशत वही वादे दुहराए गए हैं, जो 2012 के चुनाव में किए गए थे. दो नए वादे किए गए हैं, एक तो बनारस में हज हाउस बनाने की बात समाजवादी पार्टी के घोषणा पत्र में है. लेकिन, मुसलमानों के लिए मायावती ने भी कोई खास घोषणा नहीं की है. मायावती ने बस एक काम किया है कि उन्होंने मुसलमानों को सबसे ज्यादा टिकटें दी हैं और उनसे ये अपील की है कि अगर वो बसपा का साथ देंगे, तब भारतीय जनता पार्टी को रोका जा सकता है. मायावती, मुसलमानों के इस कमजोर नस को जानती हैं कि उन्हें जो भी उम्मीदवार भारतीय जनता पार्टी को हराता हुआ दिखाई देगा, मुसलमान उसी उम्मीदवार के पक्ष में वोट डालेंगे. इसी भावना को अपने पक्ष में मोड़ने का काम मायावती कर रही हैं.

त्रिशंकु विधानसभा बनी तो क्या होगा

क्या होगा, अगर उत्तर प्रदेश में हंग असेंबली (त्रिशंकु विधान सभा) की स्थिति बनती है. इस स्थिति में एक तरफ भारतीय जनता पार्टी अखिलेश यादव के साथ मिल कर सरकार बना सकती है और दूसरी तरफ वो मायावती के साथ मिल कर भी सरकार बना सकती है. उस समय भारतीय जनता पार्टी देखेगी कि दोनों में से कौन उसके पक्ष में शर्तें मानने के मूड में है. अभी तक उत्तर प्रदेश के किसी राजनीतिक दल का कोई वैचारिक संघर्ष नहीं दिखाई दे रहा है. अगर कहीं दिखाई दे रहा है, तो कुछ भारतीय जनता पार्टी का दिखाई दे रहा है, क्योंकि भारतीय जनता पार्टी से जुड़े राष्ट्रीय स्वयं सेवक के मनमोहन वैद्य ने बहुत सोच समझ कर बयान दिया है कि आरक्षण भेद-भाव को बढ़ाता है और वो आरक्षण नहीं चाहते हैं. यह बयान बेख्याली में दिया हुआ नहीं है. यह बयान राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और भारतीय जनता पार्टी की उस सोच को बताता है, जिसमें कॉमन सिविल कोड है, आर्टिकल 370 की समाप्ति है और मुसलमानों को अपीज (तुष्ट) न किया जाए यह भी शामिल है. उन्हें लगता है कि उत्तर प्रदेश में वे हर हालत में चुनाव जीत सकते हैं, क्योंकि यहां हिंदुओं की संख्या ज्यादा है. अगर वे चुनाव जीतते हैं, तो बचे हुए दो साल में वे अपने विचार के अनुसार सारे देश में अपने फैसलों को लागू कर सकते हैं. शायद, इसीलिए अखिलेश यादव ने कहा कि उत्तर प्रदेश का चुनाव दरअसल 2019 का दिल्ली का चुनाव है. उनके इस वाक्य का विरोध न मायावती जी ने किया है, न कांग्रेस ने किया है और न भारतीय जनता पार्टी ने किया है. देखते हैं, ये चुनाव किनके चेहरे पर मुखौटे लगाता है, किनके चेहरे के मुखौटे उतारता है. ये जनता का भी इम्तिहान है कि वो किनके तर्कों से प्रभावित होती है, किनके तर्कों से प्रभावित नहीं होती है. लेकिन, हम अखिलेश यादव की इस बात से पूरी तरह से सहमत हैं कि उत्तर प्रदेश का चुनाव 2019 के लिए दिल्ली के रास्ते की दिशा और शर्तें तय करेगा.■

editor@chauthiduniya.com

राजनीतिक मुठभेड़ के बीच फ़र्ज़ी मुठभेड़ का मुद्दा ग़ायब

मणिपुर

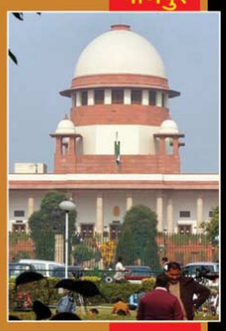

स्थानीय पुलिस और पैरामिलिट्री फोर्स अफ्सपा की आड़ में ऐसे फ़र्ज़ी मुठभेड़ों को अंजाम देती रही है. केंद्र सरकार एक तरफ पूर्वोत्तर को मुख्यधारा में लाने की बात करती है, वहीं दूसरी तरफ निर्दोष लोगों को मारने वाले क़ानून लागू करवाती है. फर्जी मुठभेड़ पर ज्यादा हो-हल्ला होने के बाद लोगों को शांत कराने के लिए सरकार की तरफ से एक कमिटी बना दी जाती है. यह सरकार का दोतरफा रवैया ही दिखाता है कि अपने ही क़ानून के गलत इस्तेमाल को स्वीकार न करके सरकार कमिटी बनाकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेती है.

एस. बिजेन सिंह

मणिपुर के मुख्यमंत्री इबोबी सिंह का कार्यकाल 18 मार्च 2017 को समाप्त हो रहा है. यह राज्य में उनकी तीसरी सरकार है. आगामी चार और आठ मार्च को दो चरणों में मणिपुर में विधानसभा चुनाव होने हैं. उनके कार्यकाल के इतिहास में फर्जी एनकाउंटरों में मौत की एक लंबी कहानी रही है. इन पंद्रह सालों में राज्य में कानून व्यवस्था की स्थिति शर्मसार कर दी गई थी. सुप्रीम कोर्ट ने भी उनकी सरकार को फटकार लगाई थी. यूनाइटेड नेशन्स एवं मानवाधिकार के लिए काम करने वाले कई सामाजिक संगठनों ने मिलकर पुलिस, पैरामिलिट्री एवं आर्मी द्वारा फर्जी मुठभेड़ों में मारे गए लोगों की एक रिपोर्ट तैयार की थी. जिसे उन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ में फर्जी मुठभेड़ों के मामले को देखने वाले विशेष दूत क्रिस्टोफ हेन्स को मार्च 2012 में सौंपी थी. इस रिपोर्ट के मुताबिक 1979 से 2012 तक राज्य में 1528 लोग पुलिस, पैरामिलिट्री एवं आर्मी द्वारा कथित रूप से फर्जी एनकाउंटर में मारे गए थे. इन मुठभेड़ों में मारे गए लोगों को न्याय दिलाने के लिए एक्स्ट्रा ज्यूडिसियल एक्जिक्यूशन विक्टिम फैमिलिज एसोसिएशन (ईईवीएफएएम) मणिपुर एवं ह्यूमन राइट्स अलर्ट ने सुप्रीम कोर्ट में उक्त आंकड़ों के आधार पर एक याचिका दायर की है. ईईवीएफएएम फर्जी मुठभेड़ में मारे गए लोगों के परिवार वालों का एक संगठन है, जो न्याय दिलाने के लिए विभिन्न मानवाधिकार संगठनों के साथ मिल कर काम कर रहा है.

एक्स्ट्रा ज्यूडिशियल एक्जीक्यूशन विक्टिम फैमिलीज एसोसिएशन और ह्यूमन राइट्स अलर्ट की याचिका के आधार पर 15 जुलाई 2013 को सुप्रीम कोर्ट ने राज्य के छह मुठभेड़ों के मामले में एक फैसला सुनाया. ये सभी मुठभेड़ फर्जी थे. दो संस्थाओं एक्स्ट्रा ज्यूडिशिएल एक्जीक्यूशन विक्टिम फैमिलीज एसोसिएशन और ह्यूमन राइट्स अलर्ट ने यह पीटिशन सितंबर 2012 को सुप्रीम कोर्ट में फाइल की थी. इस पीटिशन में लिखा था कि 1979 से 2012 तक मणिपुर में मुठभेड़ में 1528 लोग मारे गए, जिन पर कोई कानूनी कार्रवाई नहीं हुई. उन संस्थाओं की मांग थी कि सुप्रीम कोर्ट की देख-रेख में इन मुठभेड़ों की जांच पड़ताल हो. पीटिशन के आधार पर सुप्रीम कोर्ट ने तीन लोगों का एक कमीशन बनाया था, जिसके चेयरमैन बने सुप्रीम कोर्ट के पूर्व जस्टिस संतोष हेगड़े. इस कमेटी में पूर्व चीफ इलेक्शन कमिश्नर जीएम लिंगदोह और कर्नाटक के पूर्व डीजीपी अजय कुमार सिन्हा भी शामिल थे. कमीशन ने इंफाल जाकर पहले छह केस की

जांच की थी. इसके बाद इस कमीशन ने 12 सप्ताह में सुप्रीम कोर्ट को अपनी रिपोर्ट सौंपी.

नेशनल ह्यूमन राइट्स कमीशन (एनएचआरसी) की एक टीम भी मणिपुर में हो रहे फर्जी मुठभेड़ मामलों की गहन तहकीकात के लिए 23 अक्टूबर 2013 को इंफाल गई थी. इंफाल से लौटने के बाद 19 नवंबर को एनएचआरसी के प्रतिनिधि सत्यव्रत पाल ने कहा था कि 2005-2010 के दौरान होने वाले 44 फर्जी मुठभेड़ के मामले एनएचआरसी के संज्ञान में आए हैं. अधिकतर मामलों में राज्य सरकार और उसकी मशीनरी ही दोषी पाई गई है. राज्य में तैनात पुलिसकर्मियों द्वारा सेल्फ डिफेंस के नाम पर अधिकतर मुठभेड़ को अंजाम दिया गया है. पाल ने कहा कि राज्य सरकार दोषियों को सजा दिलाने में बिल्कुल भी संवेदनशील नहीं है. यह अधिकारियों के बीच सहयोग की कमी दिखाता है. एनएचआरसी ने यह भी कहा कि अधिकतर बड़े फर्जी मुठभेड़ में राज्य की पुलिस पर ही सवालिया निशान हैं. सरकारी मशीनरी द्वारा उनको बचाया जा रहा है. एनएचआरसी ने राज्य सरकार को फटकार लगाई कि मामले की सही सुनवाई होनी चाहिए. दोषियों को निष्पक्ष रूप से सजा दिलाना होगा. राज्य सरकार को कमीशन ने कठघड़े में खड़ा किया था. इसके बाद तत्काल प्रभाव से राज्य में तैनात 15 पुलिसकर्मियों को हटाया गया, जो फर्जी मुठभेड़ मामले में लिप्त थे. इनमें से 9 पुलिसकर्मी संजीत और रवीना कांड में भी शामिल थे. संजीत और रवीना फेक एनकाउंटर राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा का विषय बना था. दिल्ली से प्रकाशित होने वाली एक पत्रिका ने इस कांड से जुड़ी 12 तस्वीरें छाप कर राज्य के पुलिसकर्मियों की पोलपट्टी खोल दी थी. उन तस्वीरों में साफ-साफ दिखाया गया था कि कैसे इंफाल में तैनात पुलिस कमांडो द्वारा फर्जी एनकाउंटर को अंजाम दिया गया था.

अधिकारविहीन है मणिपुर मानवाधिकार आयोग

मणिपुर मानवाधिकार आयोग की स्थिति बिल्कुल दयनीय है. राज्य में इसका अस्तित्व न के बराबर है. गुवाहाटी हाईकोर्ट के आदेश के बाजवूद अबतक सदस्यों की नियुक्ति नहीं की गई है. इबोबी सरकार ने पिछले सात सालों से नियुक्ति प्रक्रिया को लटकाए रखा है. सदस्यों के अभाव और संसाधनों के गैर आवंटन के कारण मणिपुर मानवाधिकार आयोग लगभग मृतप्राय हो गया है. यही कारण भी है कि मणिपुर पुलिस पिछले 15 वर्षों से मुठभेड़ मामलों में कोई प्राथमिकी भी दर्ज नहीं कर रही है और इसपर कोई आवाज भी नहीं उठा रहा है. कानून व्यवस्था के मामले में मणिपुर की इस दयनीय स्थिति को देखते हुए सुप्रीम कोर्ट ने यहां तक कहा कि इसमें कोई शक नहीं है कि यह राज्य आंतरिक अशांति के दौर से गुजर रहा है. त्रासदी यह है कि यह स्थिति बीते 60 सालों यानी 1958 से लगातार जारी है.

आंकड़ों पर गौर करें तो राज्य में 2003 में फर्जी मुठभेड़ों में 90 लोग मारे गए. वहीं 2008 में यह संख्या बढ़कर 355 हो गई. संजीत फर्जी एनकाउंटर मामले में तो हेड कांस्टेबल थौनाउजम हेरोजीत सिंह ने स्वीकार भी किया था कि 23 जुलाई 2009 को संजीत के एनकाउंटर के लिए उसे इंफाल ईस्ट के एएसपी डॉ. अकोइजम झलजीत सिंह का आदेश मिला था. ध्यान देने वाली बात यह है कि इससे पहले 9 सितंबर 2010 को ही सीबीआई इस मामले में चार्जशीट दाखिल कर चुकी है. कांस्टेबल थौनाउजम की स्वीकृति के बाद इस मामले में फिर से सीबीआई जांच के लिए संजीत की मां ने ट्रायल कोर्ट में एक याचिका दायर की थी, जिसे कोर्ट ने खारिज कर दिया. इसके बाद उन्होंने सीबीआई डायरेक्टर को चिट्ठी लिखकर गुहार लगाई है कि हेरोजीत के खुलासे के आधार पर फिर से इस मामले की जांच करवाई जाए. अब देखना यह है कि सीबीआई उनके इस पत्र पर क्या कार्रवाई करती है.

इस मामले में भाजपा की मणिपुर इकाई ने प्रधानमंत्री कार्यालय को पत्र लिखकर मांग की है कि इबोबी सिंह के अबतक के कार्यकाल में हुए सभी फर्जी मुठभेड़ों की जांच कराई जाए. पीएमओ को भेजी गई इस चिट्ठी में मणिपुर भाजपा की तरफ से कहा गया है कि 2002 से 2012 तक जब इबोबी सिंह मुख्यमंत्री के साथ-साथ गृहमंत्री भी थे, इस दौरान कई फर्जी मुठभेड़ हुए जिसमें कई निर्दोष लोग मारे गए. उन लोगों के साथ न्याय हो, इसके लिए जरूरी है कि इबोबी सिंह को बर्खास्त कर के इस मामले की निष्पक्ष जांच कराई जाए. लेकिन इस चिट्ठी का कोई असर होगा इसकी संभावना की ही है. क्योंकि संजीत की मां द्वारा सीबाआई को लिखी गई चिट्ठी पर अब तक कोई कार्रवाई नहीं की जा सकी है. सीबीआई केंद्र सरकार के ही अधीन है. भाजपा सरकार चाहती, तो इस मामले में फिर से सीबीआई जांच का आदेश दे चुकी होती. अब चुनाव सर पर आने के बाद प्रदेश के भाजपा नेताओं द्वारा पीएमओ को यह चिट्ठी भेजना केवल राजनीतिक फायदे की तरफ ही इशारा करता है. वहीं कांग्रेस का कहना है कि भाजपा चुनावी फायदे के लिए कांग्रेस को बदनाम कर रही है.

स्थानीय पुलिस और पैरामिलिट्री फोर्स अफ्सपा की आड़ में ऐसे फर्जी मुठभेड़ों को अंजाम देती रही है. केंद्र सरकार एक तरफ पूर्वोत्तर को मुख्यधारा में लाने की बात करती है, वहीं दूसरी तरफ निर्दोष लोगों को मारने वाली कानूनें लागू करवाती है. फर्जी मुठभेड़ पर ज्यादा हो-हल्ला होने के बाद लोगों को शांत कराने के लिए सरकार की तरफ से एक कमिटी बना दी जाती है. यह सरकार का दोतरफा रवैया ही दिखाता है कि अपने ही कानून के गलत इस्तेमाल को स्वीकार न करके सरकार कमिटी बनाकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेती है. एक नहीं, कई कमेटियां बनाई गईं. जस्टिस जीवन रेड्डी कमेटी, जस्टिस वर्मा कमेटी, संतोष हेगड़े कमेटी आदि. बावजूद इसके आज तक कुछ नहीं हुआ और निर्दोष लोग मारे जा रहे हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

ओड़ीशा

फ़र्ज़ी एनकाउंटर की बढ़ती संख्या से भी नहीं टूट रही सरकार की नींद

बलि का बकरा बनते आदिवासी

निरंजन मिश्रा

भारतीय न्याय प्रणाली कहती है कि भले ही कोई दोषी बच जाय, लेकिन किसी निर्दोष को सजा नहीं होनी चाहिए. पर अफसोस कि खुद को सफल दिखाने की प्रशासनिक जल्दबाजी कई बार निर्दोषों को बली का बकरा बना देती है. दोषी तो बचते ही हैं, जो मारे जाते हैं, उन्हें यह भी पता नहीं होता कि उनका जुर्म क्या था. यहां तक कि उन्हें अपनी बात कहने का भी मौका नहीं दिया जाता. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की एक रिपोर्ट कहती है कि 2004-05 से 2013-14 के बीच सेना-पुलिस द्वारा किए गए एनकाउंटर में 1654 लोग मारे गए हैं. चिंता की बात यह है कि इनमें से ज्यादातर एनकाउंटर की विश्वसनियता सवालों के घेरे में हैं. आंकड़े बताते हैं कि भारत में हर दूसरे दिन एक आदमी एनकाउंटर में मारा जाता है.

हाल के कुछ वर्षों में ओड़ीशा की धरती ऐसे ही आदिवासियों के खून से लाल हो रही है, जो सेना-पुलिस द्वारा एनकाउंटर में मार दिए गए और मारे जा रहे हैं. हालांकि ऐसे एनकाउंटरों में से अधिक के फर्जी होने के प्रमाण के बाद भी इनकी संख्या में कमी नहीं आ रही है. कई मानवाधिकार संगठनों और न्यायालय द्वारा फटकार के बाद भी सरकार और प्रशासन की तंद्रा टूट नहीं रही है. ताजा मामला है, ओड़ीशा मानवाधिकार आयोग (ओएचआरसी) की एक रिपोर्ट का, जिसमें आयोग ने 2015 के एक एंटी-नक्सल ऑपरेशन को लेकर ओड़ीशा सरकार को फटकार लगाई है. 26 जुलाई 2015 को कंधमाल के कोटागाड़ा में नक्सल ऑपरेशन की आड़ में एक दंपती को मार दिया गया था. आयोग की जांच में एनकाउंटर फर्जी पाया गया. ओएचआरसी की ओर से 3 जनवरी को सरकार को भेजे गए रिपोर्ट में कार्यकारी अध्यक्ष बीके मिश्रा ने ओड़ीशा सरकार को आदेश दिया है कि नायक और विथीन के परिजनों को 2 महीने के भीतर 10 लाख का मुआवजा दिया जाय. एनकाउंटर के बाद से ही क्षेत्र में चर्चा थी कि वह एनकाउंटर फर्जी था और पुलिस ने बिना किसी जांच-पड़ताल के ही दुबेश्वर नायक और उनकी पत्नी बुधुड़ी विथीन को गोली मार दी थी. इस मामले में तो परिजन और मानवाधिकार संगठन शुरू से सक्रीय थे, इसलिए सच्चाई सामने आ गई. वरना ऐसे कई एनकाउंटर होते हैं, जिसकी सच्चाई दबी रह जाती है और मरने वाले आम आदिवासी की पहचान भी माओवाद से जोड़ दी जाती है. सरकार भी ऐसे मामलों में तब तक अपनी सक्रीयता नहीं दिखाती जब तक कि मामला मीडिया में नहीं आता और हो-हल्ला नहीं होता. ओएचआरसी की रिपोर्ट में जस्टिस मिश्रा ने कहा भी है कि राज्य सरकार आदिवासियों के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन ठीक तरह से नहीं कर पा रही है, यही कारण है कि फर्जी एनकाउंटर की आड़ में निर्दोष आदिवासी मारे जा रहे हैं.

सवालों के घेरे में पुलिसिया कार्रवाई

2014 में एक एनकाउंटर के सवालों के घेरे में आने के बाद सुलवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि हम इस बात से अनजान नहीं हैं कि भारत में अपराधियों से लोहा लेना पुलिस के लिए हमेशा ही एक मुश्किल काम रहा है. आतंकियों, अलगाववादियों और हार्डकोर नक्सलियों के खिलाफ किए जाने वाले ऑपरेशन तो और भी खतरनाक होते हैं. लेकिन इसका मतलब यह कतई नहीं है कि अपराध से निबटने में संवैधानिक मूल्यों और कानूनों की अनदेखी की जाय. लगातार सवालों के घेरे में आ रहे पुलिस एनकाउंटर के बाद सुप्रीम कोर्ट ने एनकाउंटर को लेकर पुलिस के लिए एक गाइडलाइन भी जारी की थी, जिसमें 16 बिंदुओं पर फोकस किया गया था. इसमें यह बात भी कही गई थी कि राज्य सरकारें यह सुनिश्चित करें कि एनकाउंटर के बाद वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग कर के निस्पक्षता से उसकी जांच हो. अफसोस कि इन सब के बावजूद कुछ समय के अंतराल पर अब भी लगातार ऐसे फर्जी एनकाउंटर सामने आ रहे हैं.■

लंबी है फर्जी एनकाउंटर की फेहरिस्त

पिछले साल 8 जुलाई को कंधमाल के ही बालीगुड़ा में एंटी-नक्सल ऑपरेशन के दौरान ऑटो रिक्शा पर सवार 12 आदिवासियों पर पुलिस ने फायरिंग की थी, जिसमें 5 की मौत हो गई और 4 बुरी तरह जख्मी हो गए थे. मारे गए लोगों में एक बच्ची भी शामिल थी. सभी आदिवासी मनरेगा की मजदूरी के बाद अपने गांव लौट रहे थे. इस घटना के बाद ओड़ीशा भाजपा के प्रवक्ता सज्जन शर्मा ने कहा था कि नक्सल ऑपरेशन की आड़ में सरकार आदिवासियों के साथ जानवरों जैसा व्यवहार कर रही है. मामले में 11 जुलाई को ओएचआरसी ने ओड़ीशा पुलिस के उच्च अधिकारियों को नोटिस जारी किया था. 14 नवंबर 2012 को पुलिस और नक्सल नेता सव्यसाची पांडा के गुट से मुठभेड़ की खबर आई थी. बताया गया था कि इस मुठभेड़ में 5 नक्सली मारे गए हैं. लेकिन बाद में मीडिया से बातचीत में सव्यसाची पांडा ने कहा था कि पुलिस मारे गए जिन 5 लोगों को मेरे गुट का नक्सली बता रही है, वे निर्दोष ग्रामीण हैं और उनका मेरे पार्टी कैडर से कोई संबंध नहीं है. मारे गए लोगों के परिजनों ने भी यह कहा था कि वे तो खुद ही माओवादियों से डरकर रहते हैं, वे उनका साथ कैसे दे सकते हैं. मानवाधिकार के लिए काम करने वाले कई ग्रुपों के सम्मिलित संगठन, कॉर्डिनेशन ऑफ डेमोक्रेटिक राइट्स ऑर्गनाइजेशन (सीडीआरओ) ने इस मामले की तह तक जा कर सच्चाई का पता लगाने के लिए छह सदस्यों की एक फैक्ट फाइंडिंग टीम का गठन किया था. इस टीम की छानबीन में यह सामने आया कि मारे गए पांचो आदिवासियों पर पुलिस को शक था कि वे माओवादियों से मिले हुए थे और इसी शक के आधार पर उनका एनकाउंटर कर दिया गया. दिसंबर 2010 में ऐसी ही तीन घटनाएं सामने आई थीं, जिनमें करीब 25 लोगों पर माओवादी होने का आरोप लगा कर उनका एनकाउंटर किया गया था. उनमें से कुछ लोगों को छोड़कर बाकी सभी आदिवासी थे. मारे गए लोगों में 10 महिलाएं और एक बच्ची भी शामिल थी. सभी को बड़ी बेरहमी से मारा गया था. इस मामले में भी मानवाधिकार आयोग ने संज्ञान लिया था. काशीपुर और कलिंगानगर में 2000 से 2006 के बीच 17 आदिवासियों के एनकाउंटर पर भी सवाल उठे थे.

इधर कुआं उधर खाई

ओड़ीशा प्राकृतिक संसाधनों के मामले में अग्रणी राज्यों में से एक है. जंगल और खनिज संसाधन के मामले में धनी इस राज्य में कोयला, बॉक्साइट, क्रोमाइट, आयरन और निकेल के भंडार हैं. जाहिर है, इनके खनन के लिए कई सरकारी योजनाएं चल रही हैं. माओवादियों के साथ-साथ कई स्थानीय संगठन भी ऐसे खनन का विरोध करते रहते हैं. योजनाओं के ठीक ढंग से कार्यान्वयन के लिए सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए स्थानीय पुलिस के साथ-साथ अर्द्धसैनिक बलों को भी नियुक्त किया गया है. जो विकास कार्यों के सफल संचालन के लिए माओवादियों के हिंसात्मक विरोध को दबाने की कोशिश करते हैं. लेकिन ऐसी कोशिशों में कई बार निर्दोष ग्रामीण भी पुलिसिया कार्रवाई का शिकार हो जाते हैं. ज्यादातर स्थानीय आदिवासी माओवादियों से मिले होने के शक में मारे जाते हैं. वहीं दूसरी तरफ माओवादी, पुलिस का मुखबीर होने के शक में निर्दोष लोगों को मारते हैं. इस तरह की कई घटनाएं सामने आने के बाद भी नक्सल ऑपरेशन की आड़ में मर रहे निर्दोष आदिवासियों को बचाने के लिए सरकार और पुलिस-प्रशासन कोई ठोस कदम नहीं उठा रही है.■

पीएम की नसीहतें ताक़ पर, टिकट बांटने में परिवारवाद और गुटवाद खुल्लमखुल्ला

मोदी का चेहरा जीतने में भी और पोतने में भी

एक तरफ सांसदों के बेटे, पत्नियों, रिश्तेदारों को टिकट दिया गया तो दूसरी तरफ सांसद जगदंबिका पाल के बेटे को टिकट देने में नैतिक तर्क-कुतर्क किए गए. भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह समेत तमाम नेता जो टिकट के बंटवारे में मुख्य भूमिका अदा कर रहे थे, परिवारवाद के अपने पुराने भाषण भूल गए. वे वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव के पहले नरेंद्र मोदी के भाषणों को भी भूल गए, जिसमें परिवारवाद को पूरी तरह खारिज कर जनता का समर्थन हासिल किया गया था.

प्रभात रंजन दीन

भारतीय जनता पार्टी ने अपने ही प्रधानमंत्री को किनारे लगा दिया. भाजपा नेता ही कहते हैं कि संगठन के शीर्ष नेता मोदी का चेहरा चुनाव जीतने के लिए भी इस्तेमाल करते हैं और उसी चेहरे पर कालिख भी पोतते हैं. प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कहते रहे कि टिकट के बंटवारे में भाई-भतीजावाद, पक्षवाद और गुटवाद हरगिज न हो, लेकिन पार्टी ने मोदी की हिदायत को ताक पर रखते हुए छूट कर भाई-भतीजावाद, पक्षवाद और गुटवाद का खेल खेला. मूल कार्यकर्ताओं की घोर उपेक्षा हुई. गुटबाजी के कारण वरिष्ठ पदाधिकारी और नेता टिकट पाने से वंचित रह गए, लेकिन चाटुकार जूनियर टिकट पा गए और वरिष्ठों को अंगूठा दिखा रहे हैं. इसके अलावा बाहर से टपकने वाले नेताओं की भी पौ बारह रही. यह सबसे नैतिक और चरित्रवान पार्टी का हाल है, जिसके नेता राजनीतिक-सामाजिक मंचों से कांग्रेस और समाजवादी पार्टी के परिवारवाद को धिक्कारते रहे हैं, लेकिन इन्हें खुद के आचरण का कोढ़ दिखाई नहीं देता.

भाजपा प्रत्याशियों की अब तक जितनी भी लिस्ट घोषित हुई है, उसमें परिवारवाद और गुटवाद का बेशर्म प्रदर्शन हुआ है. भाजपा ने केंद्रीय गृह मंत्री राजनाथ सिंह के बेटे पंकज सिंह को नोएडा से टिकट दिया है. इसी तरह भाजपा सांसद ब्रजभूषण शरण सिंह के बेटे प्रतीक भूषण को गोंडा से टिकट मिला. सांसद हुकुम सिंह की बेटी मृगांका सिंह को कैराना से भाजपा प्रत्याशी बनाया. सांसद कौशल किशोर की पत्नी जयदेवी को मलिहाबाद से प्रत्याशी बनाया गया. सांसद कमलेश पासवान के बेटे विमलेश पासवान बांसगांव से प्रत्याशी बनाए गए. सांसद सर्वेश सिंह के बेटे सुशांत सिंह को बढ़ापुर से टिकट मिला है. भाजपा नेता प्रेमलता कटियार की बेटी नीलिमा कटियार को कल्यानपुर से तो रामलाल राही के बेटे सुरेश राही को सीतापुर के हरगांव से टिकट दिया गया है. लालजी टंडन के बेटे आशुतोष टंडन को लखनऊ उत्तर से टिकट मिला है. आशुतोष टंडन उर्फ गोपाल टंडन के साथ एक आधार तो यह बनता है कि इस सीट से वे ही विधायक थे. भाजपा के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष ओमप्रकाश सिंह के बेटे अनुराग सिंह को चुनार से भाजपा का टिकट मिला. राजस्थान के राज्यपाल और उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री कल्याण सिंह की बहू प्रेमलता और पोते संदीप सिंह उर्फ संजू भैया को भी भाजपा ने टिकट दे दिया. कल्याण सिंह के बेटे राजवीर सिंह पहले ही एटा से सांसद हैं.

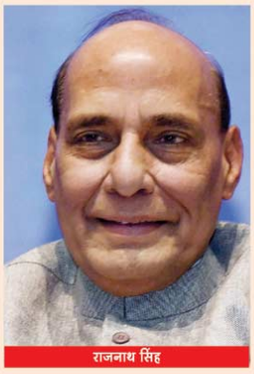

राजनाथ सिंह

कल्याण सिंह

रीता बहुगुणा जोशी

लालजी टंडन

स्वामी प्रसाद मौर्य

हुकुम सिंह

बाहर से आए नेताओं में स्वामी प्रसाद मौर्य को पडरौना से टिकट मिला तो उनके बेटे उत्कर्ष मौर्य को ऊंचाहार से टिकट दिया गया. बसपा से ही आए सांसद जुगुल किशोर के बेटे सौरभ सिंह को कस्ता से टिकट मिला. बसपा से भाजपा में आए बृजेश पाठक को लखनऊ मध्य की प्रतिष्ठित सीट से भाजपा ने अपना प्रत्याशी बनाया है. कांग्रेस से आईं रीता बहुगुणा जोशी को लखनऊ कैंट से टिकट मिला है. बसपा से आए भगवती सागर को बिल्हौर से और प्रतिभा शुक्ल को अकबरपुर रनिया से टिकट मिला. कांग्रेस से आए नीरज बोरा को भाजपा ने लखनऊ उत्तर से अपना प्रत्याशी बनाया तो कांग्रेस से आए अभिजित सांगा बिदूर से भाजपा प्रत्याशी बनाए गए. बसपा सरकार में मंत्री रहे नंद कुमार गुप्ता नंदी को भाजपा ने इलाहाबाद दक्षिण से अपना उम्मीदवार बनाया. इसी तरह सपा से आए कुलदीप सेंगर बांगरमऊ से भाजपा के प्रत्याशी बने तो कांग्रेस से आए संजय जायसवाल रुधौली से भाजपा के प्रत्याशी बने. पूर्व सपा नेता रंजना वाजपेयी के बेटे हर्ष वाजपेयी को इलाहाबाद उत्तर से टिकट मिला तो कांग्रेस नेता संजय सिंह की पहली पत्नी गरिमा सिंह को अमेठी से टिकट दिया गया.

इसी तरह लाल बहादुर शास्त्री के नाती सिद्धार्थ नाथ सिंह को इलाहाबाद पश्चिम से भाजपा ने अपना प्रत्याशी बनाया. पूर्व बसपाई महावीर राणा को बेहट से और धर्मसिंह सैनी को नकुट से भाजपा का टिकट मिला. कांग्रेस से आए प्रदीप चौधरी को गंगोह से और बसपा से आए ओम कुमार को नटहोर से भाजपा ने टिकट दिया. बलदेव सीट पर लोकदल से आए पूरनप्रकाश को भाजपा का टिकट मिला. बसपा से आए अरविंद गिरि को गोला गोकरणनाथ से, रोमी साहनी को पलिया से, बाला प्रसाद अवस्थी को धौरहरा से और रौशन लाल वर्मा को तिलहर से भाजपा का टिकट मिल गया. भाजपा का टिकट पाने वाले ऐसे टपकाऊ नेताओं की सूची काफी लंबी है.

परिवारवाद के खिलाफ भाजपा में अंतरंग और बहिरंग बवाल जारी है. इसका असर चुनाव के परिणाम पर निश्चित तौर पर पड़ेगा. नोएडा के सांसद प्रतिनिधि संजय बाली ने भाजपा के इस नैतिक स्खलन के खिलाफ इस्तीफा दे दिया है. नोएडा विधानसभा सीट के लिए केंद्रीय गृह मंत्री राजनाथ सिंह के बेटे पंकज सिंह को टिकट देने के कुचक्र में दूसरे केंद्रीय मंत्री महेश शर्मा की अनदेखी कर दी गई, जबकि श्री शर्मा ही वहां के सांसद हैं. इसी तरह बस्ती के सांसद जगदंबिका पाल के बेटे अभिषेक पाल को बस्ती सदर से टिकट देने में तिकड़म रचा गया. एक तरफ सांसदों के बेटे, पत्नियों, रिश्तेदारों को टिकट दिया गया तो दूसरी तरफ सांसद जगदंबिका पाल के बेटे को टिकट देने में नैतिक तर्क-कुतर्क किए गए. भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह समेत तमाम नेता जो टिकट के बंटवारे में मुख्य भूमिका अदा कर रहे थे, परिवारवाद के अपने पुराने भाषण भूल गए. वे वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव के पहले नरेंद्र मोदी के भाषणों को भी भूल गए, जिसमें परिवारवाद को पूरी तरह खारिज कर जनता का समर्थन हासिल किया गया था. मोदी के कहे कुछ वाक्यों का यहां उल्लेख आवश्यक है. मोदी ने कहा था, 'कांग्रेस और समाजवादी पार्टी जैसे राजनीतिक दलों से कोई उम्मीद मत रखिए. लोकतंत्र उनके स्वभाव में है ही नहीं. वो केवल परिवारवाद की राजनीति के बल पर जिंदा हैं और इस मुगालते में रहते हैं कि लोग उनकी मुट्ठी में हैं.' मोदी ने सोशल मीडिया पर भी लिखा था, 'लोकतंत्र के चार दुश्मन परिवारवाद, जातिवाद, साम्प्रदायिकता और मौकापरस्ती'. नरेंद्र मोदी ने अपने ट्वीट में लिखा था, 'देश को परिवारवाद और लोकतंत्र में से किसी एक को चुनना पड़ेगा.' भाजपा के टिकट बंटवारे में शीर्ष नेताओं द्वारा मचाई गई धांधलीबाजी से बिफरे एक भाजपा नेता ने कहा, 'भाजपा के शीर्ष नेता इतने आडम्बरी हैं कि एक तरफ मोदी के चेहरे का सहारा लेकर चुनाव जीतना चाहते हैं और दूसरी तरफ उनके चेहरे पर अपनी करतूतों से कालिख भी पोतते हैं.' ■

भाजपा को फिर भी शर्म नहीं आती

आप विश्लेषणात्मक दृष्टि डालें तो आपको कांग्रेस में ही परिवारवाद कम नजर आएगा. कांग्रेस के एक दो चेहरे परम्परागत तौर पर राजनीति के केंद्र में रहे, लेकिन अन्य दलों ने तो अपनी पार्टियों को खानदानी पार्टी बना डाला और कांग्रेस पर परिवारवाद चलाने का आरोप लगाते रहे और उसी ढाल के सहारे खुद को बचाते भी रहे. भाजपा को पहली बार पूरी ताकत के साथ केंद्र में सत्ता मिली, तो उसने परिवारवाद स्थापित करने का रिकॉर्ड ही बना डाला. समाजवादी पार्टी ने तो परिवारवाद की स्थापना में नैतिकता के साथ-साथ शर्मो-हया की सारी दीवार भी लांघ डाली थी और उसी में धराशाई भी हो गई. कुछ ऐसा ही हाल भाजपा का भी होने वाला है.

लोकसभा में समाजवादी पार्टी की पांच सीटों पर मुलायम सिंह अपने परिवार के सदस्यों के साथ ही विराजमान होते हैं. यही हाल राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद यादव का है, जिन्होंने अपनी पत्नी राबड़ी देवी को मुख्यमंत्री बना कर यह स्थापित किया कि भारतीय लोकतंत्र का कोई स्तर नहीं है. अब तो लालू के बेटे बेटी सब सांसद या विधायक हैं. कोई उप मुख्यमंत्री है तो कोई मंत्री. लेकिन भाजपा और उसकी सखा पार्टियां भी दूध की धुली नहीं हैं. पंजाब में भाजपा की सखा पार्टी अकाली दल के नेता प्रकाश सिंह बादल मुख्यमंत्री हैं, तो उनके बेटे सुखबीर सिंह बादल उपमुख्यमंत्री बने बैठे हैं. प्रकाश सिंह बादल की बहू हरसिमरत कौर केंद्र में मंत्री हैं. बादल ने अपने दामाद आदेश प्रताप सिंह कैरों को भी राज्य मंत्री बना रखा है. उप मुख्यमंत्री सुखबीर सिंह बादल के साले विक्रम सिंह मजीठिया भी मंत्री हैं. अकाली दल और भाजपा, दोनों मौसेरे भाई हैं. दक्षिण में करुणानिधि और चंद्रबाबू नायडू सहित कई नेताओं की पीढ़ियां राजनीति में फल-फूल रही हैं. पूर्वोत्तर के नेता व पूर्व लोकसभा अध्यक्ष पीए संगमा की बेटी अगाथा संगमा भी केंद्र में मंत्री रहीं. केंद्र सरकार में मंत्री रामविलास पासवान के बेटे चिराग पासवान सांसद हैं. केंद्रीय मंत्री मेनका गांधी के पुत्र वरुण गांधी सांसद हैं. पूर्व केंद्रीय मंत्री यशवंत सिन्हा के बेटे जयंत सिन्हा केंद्र में मंत्री हैं. राजस्थान की मुख्यमंत्री वसुन्धरा राजे के पुत्र दुष्यंत राजे सांसद हैं. छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह के बेटे अभिषेक सिंह सांसद हैं. हिमाचल प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री प्रेम कुमार धूमल के बेटे अनुराग ठाकुर सांसद हैं. महाराष्ट्र के दिवंगत भाजपा नेता प्रमोद महाजन की बेटी पूनम महाजन सांसद हैं. दिल्ली के पूर्व भाजपा नेता स्व. साहिब सिंह वर्मा के पुत्र प्रवेश वर्मा सांसद हैं. पूर्व केंद्रीय मंत्री स्व. गोपीनाथ मुंडे की बेटी पंकजा मुंडे महाराष्ट्र सरकार में मंत्री हैं. यह भाजपा के परिवारवाद की बानगी है, फिर भी भाजपाई अलमबरदारों के चेहरों पर शर्म की रेखा दिखाई नहीं पड़ती. ■

पाखंड से बचा नहीं उत्तराखंड

परिवारवाद के पाखंड से उत्तराखंड भी नहीं बचा. उत्तराखंड में भी टिकटों के बंटवारे में परिवारवाद का खेल जम कर खेला गया. कांग्रेस से भाजपा में आए विजय बहुगुणा के बेटे सौरभ बहुगुणा को सितारगंज से टिकट दिया गया. भुवनचंद खंडूरी की बेटी ऋतु भूषण खंडूरी को यमकेश्वर से टिकट दिया गया. कांग्रेस से भाजपा में आए यशपाल आर्य को बाजपुर और उनके बेटे संजीव आर्य को नैनीताल से टिकट दिया गया. विडंबना यह है कि पूर्व मुख्यमंत्री खंडूरी की बेटी को टिकट देने के लिए भाजपा की वरिष्ठ नेता व पूर्व मंत्री विजया बड़थ्वाल को बलिदान कर दिया गया. भाजपा ने पूर्व कांग्रेसी नेता सुबोध उनियाल को नरेन्द्र नगर सीट से अपना प्रत्याशी घोषित किया. अब यमकेश्वर से विजया बड़थ्वाल और नरेन्द्र नगर सीट से ओम गोपाल दोनों नेता निर्दलीय प्रत्याशी बन कर मैदान में आ डटे हैं. इसी तरह भाजपा ने कांग्रेसी विधायक रहीं शैला रावत को केदारनाथ सीट से अपना प्रत्याशी बनाया है. भाजपा की इस दोगली नीति की वजह से भाजपा की वरिष्ठ नेता आशा देवी को निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में मैदान में उतरना पड़ा है. कांग्रेस के वरिष्ठ नेता रहे डॉ. हरक सिंह रावत को भाजपा ने कोटद्वार से अपना प्रत्याशी बनाया है, हालांकि यह सीट हरक सिंह रावत के लिए मुश्किलों वाली सीट साबित हो रही है.

भुवनचंद खंडूरी

विजय बहुगुणा

भाजपा के इस अनैतिक तौर-तरीकों पर तीखा प्रहार करते हुए उत्तराखंड के मुख्यमंत्री हरीश रावत ने कहा कि भाजपा की सूची दल-बदलुओं और परिवारवाद से भरी हुई है. रावत ने इस पर गहरा आश्चर्य जाहिर किया कि परिवारवाद के खिलाफ प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की नसीहतों का भी भाजपा नेताओं ने कोई ध्यान नहीं रखा. प्रधानमंत्री परिवारवाद से दूर रहने की हिदायत दे रहे हैं और उनकी पार्टी परिवारमय होती जा रही है. रावत ने कहा कि जिन नेताओं के खिलाफ आपदा घोटाला, बीज घोटाला, भूमि घोटाला, पालीहाउस घोटाला, दाबका और कोसी नदी में खनन घोटाला और नोटबंदी के बाद सहकारी बैंकों में अप्रत्याशित रूप से नोट जमा करने जैसे गंभीर आरोप लगे, वे सभी नेता अब भाजपा के सूत्रधार, प्रणेता और संचालक बन गए हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

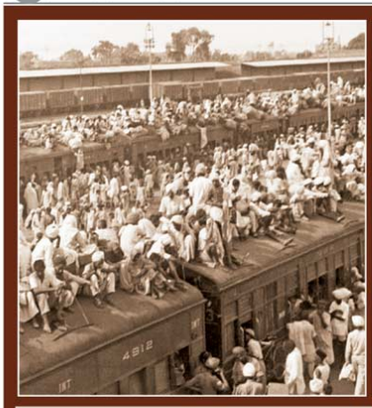

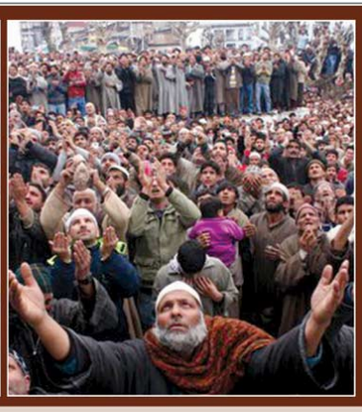

जम्मू-कश्मीर से जुड़े विभिन्न प्रवासी राजनीतिक रंजिश के शिकार

हारून रेशी

जम्मू-कश्मीर के जारी विधानसभा सत्र में पिछले दिनों उन कश्मीरी प्रवासियों के पुनर्वास की गूंज सुनाई दी, जो 1947 में या उसके बाद जबरन सीमा पार धकेल दिये गये या फिर बेबसी की हालत में खुद ही अपना वतन छोड़कर पाकिस्तान चले गये हैं. अमूमन अपने विवादित बयानों या संवेदनशील मामलों पर टिप्पणी के कारण सुर्खियों में रहने वाले अवामी इत्तेहाद पार्टी के अध्यक्ष और विधानसभा सदस्य इंजीनियर रशीद ने सदन में ये मसला उठाया. इस विवादित बयान पर इंजीनियर को भाजपा के सदस्यों ने मौक़े पर ही लताड़ा. यहां तक कि भाजपा के एक विधानसभा सदस्य ने गुस्से में आकर कहा कि इंजीनियर को पाकिस्तान भेजा जाना चाहिए. ये पूछने पर कि आख़िर उन्होंने सदन में कश्मीरी प्रवासियों के पुर्नवास की बेमौक़ा मांग क्यों की? इंजीनियर ने 'चौथी दुनिया' को बताया कि ये बेमौक़ा मांग नहीं है. बल्कि ये एक संवैधानिक और क़ानूनी मांग है. मैं बार-बार इन प्रवासियों की घर वापसी और फिर यहां उनके पुर्नवास की मांग दोहराता रहूंगा.

कश्मीरी प्रवासियों की कहानी और उनके पुनर्वास की पुरानी मांग असल में कश्मीर की विडंबना के साथ जुड़ी हुई है. विभाजन के समय जब जम्मू में दंगे हुए, तो हज़ारों मुस्लिम परिवारों की हत्या हुई और अन्य हज़ारों परिवारों को दंगाईयों ने महाराजा की पुलिस की मदद से सीमा पार धकेल दिया. बाद के हिंसक हालात में भी जम्मू क्षेत्र के सैंकड़ों मुस्लिम परिवार विवश होकर सीमा पार चले गये हैं. हालात बेहतर हो जाने के साथ ही इन प्रवासियों को वापस घर लाने और यहां मौजूद उनकी संपत्तियां उन्हें सौंपने की मांग भी ज़ोर पकड़ने लगी. यहां तक कि इन प्रवासियों की संपत्तियां सुरक्षित रखने के लिए सरकार की तरफ से कस्टोडियन विभाग अस्तित्व में आया. इनकी सभी संपत्तियों को चिन्हित करने के बाद सरकार ने इन संपत्तियों को अपने संरक्षण में ले लिया. 1980 में पहली बार नेशनल कांफ्रेंस ने विधानसभा में इन प्रवासियों की घर वापसी और यहां उनके पुनर्वास के लिए विधायिका में एक बिल प्रस्तुत किया. दो वर्ष बाद यानि 1982 में सदन ने बहुमत से 'पुर्नवास बिल' को पारित किया और इसे स्वीकृति के लिए राज्यपाल के पास भेज दिया. राज्यपाल ने इस मामले की संवेदनशीलता को देखते हुए बिल मंज़ूर किये गये बिना इसे यह कहकर वापस भेज दिया कि इस बिल पर 'पुनर्विचार' किया जाये. लेकिन सदन ने इसमें कोई परिवर्तन किये बिना इसे दोबारा पारित किया. इसके बाद राज्यपाल के पास इस बिल को मंज़ूरी देने के अलावा कोई रास्ता नहीं था. उन्होंने 6 अक्टूबर 1982 को सदन में पारित हुए बिल को मंज़ूरी दी और इस प्रकार से पुर्नवासीय बिल एक एक्ट में बदल गया और प्रवासियों की घर वापसी का एक क़ानूनी और संवैधानिक रास्ता प्रत्यक्ष हो गया. तत्कालीन मुख्यमंत्री फारूख़ अब्दुल्ला ने घोषणा की कि पुर्नवास एक्ट को अमल में लाने की तैयारियां की जा रही हैं. ये देखकर केन्द्र सरकार ने इस बिल को राष्ट्रपति रिफ्रेंस के लिए भारतीय राष्ट्रपति के पास भेज दिया. राष्ट्रपति ने क़ानूनी सलाह के लिए इसे सुप्रीम कोर्ट को भेज दिया. सुप्रीम कोर्ट ने इस बिल को 19 वर्षों तक लटकाये रखा. इस प्रकार से लाखों कश्मीरी प्रवासियों की घर वापसी का मामला लटका रहा. 8 नवंबर 2001 को सुप्रीम कोर्ट ने बिल पर कोई जनमत किये बिना इसे ये कहकर भारतीय राष्ट्रपति को भेज दिया कि ये बिल 1982 में ही एक्ट बन चुका है. यानि अन्य शब्दों में, सुप्रीम कोर्ट ने यह स्वीकार किया कि उसके पास इस एक्ट के साथ छेड़छाड़ करने का कोई अधिकार नहीं है, लेकिन बात यहीं पर ख़त्म नहीं हुई. पैंथर्स पार्टी के अध्यक्ष प्रोफेसर भीम सिंह ने उच्चतम न्यायालय में एक जनहित याचिका पेश करते हुए कश्मीरी प्रवासियों को घर वापस लाने पर रोक लगवा दी. प्रोफेसर ने अपनी याचिका में उच्चतम न्यायालय से कहा था कि अगर पाकिस्तान से लोगों को आने की अनुमति दी जायेगी, तो उनके साथ आतंकवादी भी आ सकते हैं. फिलहाल इस क़ानून को अमल में लाने पर रोक लगी है.

इंजीनियर अब्दुल रशीद

इंजीनियर रशीद का कहना है कि दरअसल ये सब कुछ नई दिल्ली ने करवाया है. उन्होंने कहा कि दिल्ली ने इस एक्ट को लागू करने में रूकावटें पैदा करके जम्मू-कश्मीर विधानसभा की अवमानना की है. दरअसल कश्मीरी प्रवासियों की मांग की यह गूंज एक ऐसे समय में सुनाई दे रही है, जब गठबंधन सरकार में शामिल भाजपा राज्य में रह रहे पश्चिमी पाकिस्तान के हिन्दु शरणार्थियों को यहां का स्थायी निवासी बनाने की मांग कर रही है. ये वे शरणार्थी हैं, जो 1947, 1965 और 1971 के भारत-पाक युद्धों के दौरान पाकिस्तान से भागकर यहां बस गये हैं. ये शरणार्थी हज़ारों परिवारों पर आधारित हैं. इन्हें भारत की नागरिकता तो प्राप्त हो चुकी है लेकिन अब इन्हें जम्मू-कश्मीर की स्थायी नागरिकता देने की मांग की जा रही है. राज्य सरकार ने हाल ही में पश्चिमी पाकिस्तान के शरणार्थियों को निवास प्रमाण-पत्र देने की घोषणा की है. इस पर कश्मीर की सरकार की ज़बरदस्त आलोचना हुई है. ख़ासकर अलगाववादी दलों ने गठबंधन सरकार का नेतृत्व करने वाली पीडीपी पर आरोपों की झड़ी लगा दी. उनका कहना है कि ग़ैर मुल्की हिन्दु बाशिंदों को जम्मू-कश्मीर की नागरिकता देकर यहां की डेमोग्राफ़ी बदलने का प्रयास हो रहा है. इस संदर्भ में वरिष्ठ अलगाववादी नेता नईम खान का कहना है कि हमें शरणार्थियों से हमदर्दी है, लेकिन जम्मू-कश्मीर एक विवादित मसला है. यहां इन लाखों शरणार्थियों को नागरिकता देने से कई समस्याएं पैदा हो सकती हैं. अगर भारत सरकार को वाक़ई इन शरणार्थियों से हमदर्दी है, तो इन्हें किसी दूसरे राज्य में क्यों नहीं बसाया जा सकता है. 1947 में जम्मू भी कश्मीर घाटी की तरह एक मस्लिम बहुल्य क्षेत्र था, लेकिन एक ओर लाखों मुसलमानों को सीमा पार धकेल दिया गया और दूसरी ओर पश्चिमी पाकिस्तान के लाखों हिन्दुओं को यहां बसया गया. इतना ही नहीं, बहुत सारे ग़ैर राज्यों के हिन्दुओं को जाली स्टेट सब्जेक्ट दिये जा चुके हैं. इन तमाम साज़िशों के नतीजे में आज जम्मू क्षेत्र में मुसलमान अल्पसंख्यक हैं. कुछ तो इन लोगों ने किया है जो कुछ दशकों में ही एक मुस्लिम बहुल्य क्षेत्र मुस्लिम अल्पसंख्यक क्षेत्र में बदल गया. इसीलिए हम हिन्दु शरणार्थियों को यहां की नागरिकता दिये जाने के ख़िलाफ़ हैं.

ग़ौरतलब है कि जम्मू कश्मीर में जब प्रवासियों का ज़िक्र छिड़ जाता है, तो पाकिस्तान में रह रहे कश्मीरी प्रवासियों और पश्चिमी पाकिस्तान के साथ-साथ और भी दो प्रकार के प्रवासियों की बात सामने आ जाती है. एक कश्मीरी पंडित प्रवासी जो 1990 में यहां मिलिटेंसी के कारण भारत के विभिन्न राज्यों में जा बसे और दूसरा, घाटी के सीमावर्ती क्षेत्रों के वे लोग जो लाइन ऑफ कंट्रोल पर आये दिन की भारत-पाक गोलीबारी से डरकर पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर चले गये हैं. पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में आज भी वे सैंकड़ों कश्मीरी दयनीय हालत में जी रहे हैं. विश्लेषकों का कहना है कि जम्मू कश्मीर से जुड़े ये हर प्रकार के प्रवासी मानवीय मूल्यों पर पुर्नवास के हक़दार हैं. क्योंकि ये किसी ने किसी दृष्टि से कश्मीर समस्या की वजह से बदहाली की ज़िंदगी गुज़ार रहे हैं. लेकिन समस्या यह है कि नई दिल्ली फिलहाल केवल और केवल पश्चिमी पाकिस्तान के हिन्दु शरणार्थियों की समस्या हल करने की कोशिश में है और दिल्ली की इस कोशिश को राज्य के मुसलमान शक की नज़रों से देख रहे हैं. शीर्ष सामाजिक सदस्य और राजनीतिक विश्लेषक ज़रीफ़ अहमद ज़रीफ़ ने इस बाबत कहा कि आश्चर्य की बात ये है कि नई दिल्ली इंसानियत का वास्ता देकर शरणार्थियों को यहां की नागरिकता तो देना चाहती है, लेकिन राज्य के उन वास्तविक निवासियों को यहां वापस नहीं बसाना चाहती है, जो हालात के थपेड़ों का शिकार होकर यहां से पाकिस्तान चले गये हैं और जिनकी वापसी के लिए एक चुनी हुई विधानसभा ने क़ानून पास किया है. ये दोहरा मापदंड है.

ज़ाहिर है कि कश्मीर समस्या जैसे गंभीर मसले के आसपास ऐसी अनगिनत समस्याएं देखने को मिल रही हैं, जिनका सीधा संबंध इंसानी ज़िंदगियों के साथ है, लेकिन सारी समस्याएं तब तक हल नहीं हो सकतीं, जब तक भारत, पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर की सरकारें उन्हें राजनीति के बजाए मानवीय चश्मे से नहीं देखतीं. ■

feedback@chauthiduniya.com

नगा उग्रवादी समूहों को सरकार दे रही एक्सटॉर्शन मनी

चंदन राय

एक बेहद चौंकाने वाली ख़बर सामने आई है. एनआईए की टीम ने 18 जनवरी को नगालैंड में कुछ सरकारी विभागों में छापेमारी की थी. इस दौरान एनआईए टीम के हाथ कुछ ऐसे दस्तावेज लगे, जो बेहद गंभीर किस्म के थे. जब्त दस्तावेजों में कुछ उग्रवादी संगठनों को रकम दिए जाने से संबंधित रसीद मिले. पता चला कि 14 सरकारी विभाग नियमित रूप से स्थानीय उग्रवादी समूहों को एक निश्चित रकम देते थे. इसमें एक ऐसा उग्रवादी समूह भी है, जो नगा शांति समझौते में शामिल था. यह समझौता आज भी लोगों के लिए एक अबूझ पहेली बना है. किन शर्तों पर समझौता हुआ, क्या डील हुई, मेमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट क्या था, इस पर सरकार चुप है. इनमें से कुछ बातें ही पब्लिक डोमेन में आ सकीं. अगर दोनों घटनाओं को एक साथ देखें, तो स्थिति की भयावहता समझ में आती है. अब सवाल उठता है कि क्या सरकारी विभाग नियमित रूप से उग्रवादी समूहों को एक्सटॉर्शन मनी दे रहे थे या इसके तार शांति समझौते की शर्तों से भी जुड़े हैं? ऐसा इसलिए क्योंकि डेढ़ साल बीत जाने के बाद भी नगा शांति समझौता की शर्तों पर रहस्य बना है. क्या शर्तों में इन उग्रवादी संगठनों को आर्थिक मदद दिए जाने की भी बात थी? अगर नहीं, तो फिर छापेमारी के दौरान इन सरकारी विभागों से जब्त रसीदें किस ओर इशारा कर रही हैं?

एनआई को जानकारी मिली कि कुछ नगा उग्रवादी समूह एनसीएनसी (के), सीएसीएल (आईएम) और नगा नेशनल काउंसिल को सरकारी विभागों द्वारा नियमित रूप से एक्सटॉर्शन मनी दी जाती है. इनमें से एनएसीएन (आईएम) नगालैंड शांति समझौता का भी हिस्सा रह चुका है. अब एक-एक कर उन सरकारी विभागों की जानकारी भी ले लेते हैं, जो इन संगठनों को पैसा दे रहे थे. इन सरकारी विभागों में हैं-सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, मृदा एवं जल संरक्षण विभाग, सिंचाई विभाग, ग्रामीण विकास विभाग, शहरी विकास विभाग, पीडब्ल्यूडी, सड़क एवं भवन निर्माण, सूचना एवं जनसंपर्क विभाग आदि. छापे के दौरान एनआईए ने सरकारी विभागों द्वारा नगा संगठनों को दो करोड़ रुपए दिए जाने के रसीद भी जब्त किए थे. एनएससीएन के एक प्रमुख कैडर खितोशी सूमी को दिमापुर में असम राइफल्स ने 31 जुलाई 2016 को गिरफ्तार किया था. सूमी कोहिमा और दिमापुर क्षेत्र में सरकारी विभागों से एनएससीएन के संगठन के लिए पैसे जमा करता था. इस सूचना के आधार पर ही सरकारी विभागों में छापेमारी की गई थी.

यह बात सामने आई कि नगा शांति समझौते में सरकार ने एनएसीएन (आईएम) के चार हजार सशस्त्र कैडरों के लिए एक नया पारा मिलिट्री बटालियन बनाने की बात की थी. गृह मंत्रालय के सूत्रों का कहना है कि अगर यह समझौता पूरी तरह से लागू हुआ, तब केवल एनएसीएन (आईएम) के नेताओं को ही फायदा होगा. अन्य नगा संगठनों के सदस्यों को इस बटालियन में शामिल करने की बात नहीं की गई थी. ऐसे में इस समझौते का टूटना लगभग तय ही था. लेकिन, सच्चाई यह है कि एनएसीएन (आईएम) भी सरकार के टालू रवैये से खुश नहीं है. न तो उसके सशस्त्र कैडरों को बटालियन में शामिल किया गया और न ही उसे कोई अन्य सुविधाएं मिली. वहीं, खबर है कि एनएसीएन आईएम नगालैंड में अपने सशस्त्र कैडरों को फिर से संगठित करने में जुटा है. सूत्रों के अनुसार, शांति समझौते पर हस्ताक्षर के बाद एनएसीएन आईएम ने अपने सशस्त्र कैडरों की संख्या 5000 तक बढ़ा ली है.

ऐसे में सवाल ये है कि 14 सरकारी विभागों द्वारा कुछ नगा उग्रवादी समूहों को पैसा दिया जाना एक सोची-समझी रणनीति के तहत तो नहीं किया जा रहा है. शांति वार्ता में शामिल और सरकारी विभागों द्वारा पोषित कुछ नगा समूह और उग्रवादी नगा समूह के विभाजन का असर मणिपुर में भी दिखने लगा है. नगा उग्रवादी समूहों को एक-दूसरे के खिलाफ खड़ा करने की रणनीति का ही ये नतीजा है कि मणिपुर में नगालैंड से जुड़े नगा समूहों ने कई महीनों से बैरिकेडिंग कर रखी है. मणिपुर में चुनाव नजदीक हैं और केंद्र व राज्य सरकार बैरिकेडिंग हटाने के लिए न तो नगा उग्रवादी समूहों से बातचीत को तैयार है और न ही कोई समाधान निकालने को तत्पर दिख रही है. वहीं राजनीतिक जानकारों का कहना है कि केंद्र सरकार मणिपुर में चुनाव हो जाने तक इस मुद्दे पर चुप रहने में ही भलाई समझ रही है. वृहत् नगालैंड की मांग दो से अधिक राज्यों

मणिपुर, आसाम, अरुणाचल प्रदेश और नगालैंड की टेरिटरी से जुड़ी है.

यही कारण है कि इस क्षेत्र में दीर्घकालिक रणनीति अपनाने की जगह तात्कालिक समाधान खोजे जा रहे हैं. मणिपुर में शांतिपूर्ण चुनाव के लिए अर्द्धसैनिक बलों की संख्या बढ़ा दी गई है. साथ ही नगालैंड में नए साल पर अफस्पा को फिर से छह महीने के लिए बढ़ा दिया गया है. लेकिन ये सरकारी कवायद नगाओं की मांग को अनसुना कर निरर्थक ही साबित होंगे.

यहां एक बात ध्यान देने की है कि नगालैंड की राजनीतिक स्थिति थोड़ी अलग है. यहां विपक्ष नहीं है. हालत ये है कि 60 सदस्यों की विधानसभा में 59 विधायक मुख्यमंत्री टीआर जेलियांग के साथ हैं. सत्तारूढ़ नगालैंड पीपुल्स फ्रंट (एनपीएफ) नीत डेमोक्रेटिक अलायंस ऑफ नगालैंड (डीएएन) का साथ कांग्रेस व निर्दलीय भी दे रहे हैं. इस सरकार में भाजपा भी सहयोगी है. ऐसे में इन सरकारी विभागों द्वारा पैसा दिया जाना कहीं न कहीं केंद्र सरकार को भी कटघरे में खड़ा करता है.

गुप्त समझौतों से मुश्किल है शांति की राह

नगा समझौते को कभी प्रधानमंत्री मोदी और नगा नेता मोइवा गुट ने ऐतिहासिक बताया था. सरकार ने एग्रीमेंट पर साइन करते समय यह आश्वासन दिया था कि छह महीने के भीतर समझौते की शर्तों को सार्वजनिक किया जाएगा. अब सरकार यह कहकर टालमटोल कर रही है कि एनएससीएन के विभिन्न धड़ों के बीच सहमति नहीं बन पा रही है. नगा जनजातियों के अन्य गुट जब इस पर सवाल उठाने लगे, तब गृह मंत्रालय ने कहा कि यह समझौता एग्रीमेंट टू एग्री यानी सहमत होने का समझौता है. राहुल गांधी ने सदन में इस समझौते के बारे में कहा था कि यहां तक गृह मंत्री को भी समझौते की शर्तों की जानकारी नहीं दी गई है. अब हालत ये है कि शांति समझौते में शामिल उग्रवादी समूह भी समझौते की शर्तों पर सवाल उठाने लगे हैं. नगालैंड के नगा समूहों का कहना है कि (एनएससीएन आईएम) के नेता टी मुइवा मणिपुर के नगा हैं. उनकी चिंताएं मणिपुर के नगाओं तक ही सीमित हैं, इसलिए नगालैंड से जुड़े उग्रवादी समूह उनके विरोध में हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

नगा समूहों को एक मंच पर ला रहा चीन

हाल में आईबी की एक गोपनीय रिपोर्ट में इस बात का खुलासा किया गया था कि चीन नॉर्थ ईस्ट बॉर्डर इलाके में उल्फा व नगा उग्रवादी समूहों को शह देकर सुरक्षा बलों पर हमला कराने की फिराक में है. इसमें उसकी मदद नगालैंड सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड- खापलांग (एनएसीएन-के) कर रहा है. यह गुट शांति समझौते में शामिल था और बाद में पीछे हट गया था. कुछ साल पहले नॉर्थ ईस्ट के नौ उग्रवादी गुटों ने एक कॉमन प्लेटफॉर्म यूनाइटेड नेशनल लिबरेशन फ्रंट ऑफ वेस्ट साउथ ईस्ट एशिया बनाया था. बताया जा रहा है कि इन उग्रवादी गुटों को एकजुट करने में भी चीन का हाथ था. कुछ वर्ष पूर्व 18 भारतीय सैनिकों की हत्या में भी खापलांग गुट (एनएससीएन-के) का नाम सामने आया था. इसके बाद गृह मंत्रालय ने आनन-फानन में खापलांग गुट को पांच साल के लिए प्रतिबंधित कर दिया. ■

फरक्का बराज तोड़ने से ही गंगा मसले का समाधान

कुमार कृष्णन

नदियों के संरक्षण और उनके अविरल प्रवाह को बनाए रखने के लिए देश में कोई कारगर कानून नहीं होने की वजह से आए साल बिहार के बहुत सारे इलाके बाढ़ जैसी विपदा से जूझते रहते हैं. प्राचीन काल से गंगोत्री से गंगासागर तक बहनेवाली गंगा आजीविका और संस्कृति की समृद्धि की धारा को बहाती आयी है, लेकिन आधुनिक इंजीनियरों ने फरक्का जैसे बराज बनाकर गंगा को मुसीबत में तब्दील कर दिया है. चिंता की बात तो यह है कि केन्द्र सरकार बराज से होने वाले भारी नुकसान की अनदेखी करती आयी है और लोग तबाह हो रहे हैं. लेकिन वे बराज के खिलाफ आवाज नहीं उठा पा रहे हैं. बिहार सरकार भी अब होश में आयी है और जनता की तबाही के मद्देनजर एक सशक्त अभियान शुरू करने के लिए कमर कस रही है.

बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने जल प्रबंधन में लगातार हो रही चूक के प्रति आगाह करते हुए कहा है कि फरक्का बांध की वजह से गंगा नदी में लगातार गाद जम रही है, जिसके चलते नदी उथली हो गई. इसलिये इस बांध को जल्द-से-जल्द तोड़ देना चाहिए. पिछले राज्यव्यापी निश्चय यात्रा के दौरान भागलपुर के नाथनगर प्रखंड स्थित हरिदासपुर गांव में भी नीतीश ने फरक्का के कारण वहां आने वाली बाढ़ से लोगों को निजात दिलाने के लिए कोशिश करने की बात कही थी. कई अवसरों पर नीतीश ने बेहिचक कहा है कि इस गाद को साफ करने का एकमात्र तरीका है कि फरक्का बांध को तोड़ दिया जाये. यदि केन्द्र के पास इस विकल्प के अलावा कोई दूसरा विकल्प है तो उसे तुरन्त नदी में जमा गाद की सफाई का काम शुरू कर देना चाहिए. इस लिहाज से नीतीश का बांध तोड़ने का सवाल न केवल इस बांध के सन्दर्भ में प्रासंगिक है, बल्कि बड़े बांधों के निर्माण के औचित्य पर भी प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है.

साल 1975 में पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में गंगा पर बना 2.62 किमी लम्बा फरक्का बांध अस्तित्व में आने के समय से ही नर्मदा सागर और टिहरी बांधों की तरह विवादास्पद रहा है. इस बांध को बनाने का मुख्य उद्देश्य गंगा से 40 हजार क्यूसेक पानी हुगली में छोड़ना था, जिससे हुगली और कोलकाता के बीच बड़े जहाज आसानी से चल सकें. बांध में कुल 109 दरवाजे हैं. बांध के शिल्पकारों ने ऐसा अन्दाजा लगाया था कि जल से लबालब भरे बांध के जब द्वार खोले जाएंगे तो इस जल प्रवाह से न केवल हुगली और कोलकाता के बीच गंगा की तलहटी में जो गाद जमा हो जाती है, वह बह जाएगी, साथ ही कोलकाता बन्दरगाह पर भी गाद जमा नहीं होगी. लेकिन परिणाम इस सोच के अनुरूप नहीं निकले. गंगा की तलहटी में तो भरपूर गाद जमती ही रही, कोलकाता बन्दरगाह की हालत भी जस-के-तस रही. इसके उलट फरक्का बांध में जब पानी लबालब हो जाता है, तो गंगा का पानी बिहार से उत्तर प्रदेश तक थमने लगता है. इस थिर-स्थिरता के कारण गंगा के बहने की विपरीत दिशा में तेजी से गाद जमने लग गई, जिस कारण नदी की गहराई लगातार कम हो रही है.

जब यह बराज नहीं था, तो हर साल बरसात के तेज पानी की धारा के कारण 150 से 200 फीट गहराई तक प्राकृतिक रूप से गंगा नदी की उड़ाही हो जाती थी. जब से फरक्का बराज बना सिल्ट की उड़ाही की यह प्रक्रिया रुक गयी और नदी का तल

ऊपर उठता गया. जब नदी की गहराई कम होती है, तो पानी फैलता है और कटाव तथा बाढ़ के प्रकोप की तीव्रता को बढ़ाता जाता है. मालदह-फरक्का से लेकर बिहार के छपरा तक यहां तक कि बनारस तक भी इसका दुष्प्रभाव दिखता है. फरक्का बांध बनने के कारण गंगा के बाढ़ क्षेत्र में बढ़ोतरी का सबसे बुरा असर मुंगेर, नौगछिया, कटिहार, पूर्णिया, सहरसा तथा खगड़िया जिलों में पड़ा. इन जिलों में विनाशकारी बाढ़ के कारण सैकड़ों गांव विस्थापित हो रहे हैं. फरक्का बैराज की घटती जल निस्सारण क्षमता के कारण गंगा तथा उनकी सहायक नदियों का पानी उलटी दिशा में लौट कर बाढ़ तथा जलजमाव क्षेत्र को बढ़ा देता है. गंगा मुक्ति आंदोलन से लेकर बागमती के सवालों तक पर सक्रिय रहने वाले अनिल प्रकाश ने फरक्का पर काफी अध्ययन किया है. वे कहते हैं कि महज हुगली का सिल्टेशन रोकने के लिए यह बराज बनाया गया है. एक बंगाली अभियंता कपिल भट्टाचार्य ने पहले ही कह दिया था कि यह बराज असफल होगा. उन्हें उस वक्त विदेशी एजेंट करार दिया गया था. मगर उन्होंने तब जो-जो कहा था, वह सच साबित हुआ. गंगा की सहायक नदियों पर भी इसका भीषण असर पड़ रहा है. तटबंधों के टूटने की भी यह एक बड़ी वजह है. फरक्का का अशुभ असर तो इसके बनने वाले साल 1975 में ही बिहार पर पड़ गया था, जब पटना में बाढ़ आ गयी थी. इस बराज के कारण समुद्र से मछलियों की आवाजाही भी रुक गयी. फीश लैडर बालू-मिट्टी से भर गया. झींगा जैसी मछलियों की ब्रीडिंग समुद्र के खारे पानी में होती है, जबकि हिलसा जैसी मछलियां का प्रजनन ऋषिकेष के ठंडे मीठे पानी में होता है. फरक्का के कारण कटैया, फोकिया, राजबम, थमैन, झमण्ड, स्वर्ण खरैका, खंगशी, कटाकी, डेंगरास, करसा गोधनी, देशारी जैसी 60 देशी मछलियों की प्रजातियां लुप्त हो गई है. इसके कारण मछली से जीविका चलाकर भरपेट भोजन पाने वाले लाखों-लाख मछुआरों के रोजगार समाप्त हो गये.अब पश्चिम बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश में रोजाना आंध्र प्रदेश से मछलियां आती हैं. गंगा मुक्ति आन्दोलन से जुड़ी कहलगांव की फेकिया देवी बताती है कि फरक्का बैराज बनने के बाद स्थिति यह है कि गंगा में समुद्र से मछलियां नहीं आ रही हैं.

यही नहीं, बांग्लादेश की तरफ से भी इस बांध के औचित्य पर पुनर्विचार की मांग तेज हो रही है, क्योंकि बांग्लादेश की सीमा इस बांध से महज 16 किमी दूर है. बांध में जब पानी भर जाता है, तब बांग्लादेश के सीमान्त गांवों पर डूबने का खतरा मंडारने लगता है. बांग्लादेश के नदी विशेषज्ञ और सरकार अरसे से फरक्का बांध से आम जन-जीवन पर प्रतिकूल असर का मुद्दा उठा रहे हैं. उनका आरोप है कि बांध में जमा गाद, पानी का बहाव तो धीमा करता ही है, गंगा के पानी को भी बांग्लादेश के डेल्टा से दूर कर देता है. इसका असर लाखों स्थानीय किसानों और मछुआरों को उठाना पड़ता है. बांग्लादेश का यह भी कहना है कि जल बंटवारे पर संधि के बावजूद उसे गंगा से उतना पानी नहीं मिल पा रहा है. हुगली नदी में गाद जमने की समस्या आजादी से पहले की है. भारत के स्वतंत्र होने के बाद दामोदर नदी घाटी पर बने बांध के चलते यह समस्या और गम्भीर हो गई. फरक्का बांध के निर्माण का मकसद इसी समस्या से छुटकारा पाना था.

19वीं सदी में सर आर्थर कॉटन ने पहली बार इस समस्या से निजात के लिये फरक्का बांध बनाने का सुझाव दिया था. लेकिन अंग्रेजी हुकूमत के दौरान बांध बन नहीं पाया. देश के आजाद होने के बाद कोलकाता बन्दरगाह में लगातार गाद जमती रही. नतीजतन इसकी गहराई कम होती चली गई. एक वक्त ऐसा भी आया, जब तलहटी में गाद जमते जाने की वजह से कोलकाता तक बड़े जहाजों की आवाजाही रोकनी पड़ी. इसी दौरान आर्थर कॉटन के प्रस्ताव पर नए सिरे से विचार करके फरक्का बांध के निर्माण की बुनियाद रख दी गई. कोलकाता बन्दरगाह न्यास के आंकड़ों से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है. यहां के आंकड़ों से पता चला है कि बांध बनने के पहले हुगली में गाद जमा होने की रफ्तार 6.40 मिलियन क्यूबिक मीटर सालाना थी, जो अब बढ़कर 21.88 मिलियन क्यूबिक मीटर वार्षिक की दर से बढ़ रही है. हुगली नदी में ताजे पानी के साथ आने वाली गाद की मात्रा इतनी अधिक होती है कि उसे फरक्का से छोड़े जाने वाले 40 हजार क्यूसेक पानी से बहाना सम्भव ही नहीं है.

सच्चाई तो यह है कि गाद से केवल नदियां ही नहीं भरी हैं, बल्कि तालाब, झील, झरने, बरसाती नाले और कुएं भी पट गए हैं या पाट दिये गए हैं. शहरों, कस्बों और महानगरों का इस कारण जल-निकासी तंत्र अवरुद्ध हुआ है. दो साल पहले देव-भूमि केदारनाथ में हुई भयावह त्रासदी, कुछ ऐसे कारणों का परिणाम थी. किन्तु हमने इस त्रासदी से कोई सबक नहीं लिया.■

feedback@chauthiduniya.com

छत्तीसगढ़

रमन सिंह के कार्यकाल में बढ़ी प्रशासनिक गुंडागर्दी

सोरीन शर्मा

प्रदेश में ऐसे दागी अफसरों की लम्बी सूची है, जो मुख्यमंत्री रमन सिंह के कार्यकाल में सबसे ज्यादा आर्थिक अनियमितता एवं घोटाले करने के आरोपों से घिरे हुए हैं. राज्य में पुलिस के कई आलाधिकारियों पर भी गंभीर आरोप लगे जिसमे सबसे चर्चित चेहरों में आईपीएस राजकुमार देवागन तथा आईपीएस पवनदेव हैं. राजकुमार देवगन को तो जबरदस्ती रिटायरमेंट दे दिया गया है, अब पवनदेव पर भी गाज गिरने वाली है. गृहमंत्री रामसेवक पैकरा ने आईजी पवन देव के खिलाफ जल्द कार्रवाई किये जाने का संकेत देते हुए कहा है कि इस मामले में जांच पूरी हो चुकी है. जांच रिपोर्ट का परीक्षण किया जा रहा है इसके बाद कार्रवाई की जायेगी.

19 साल पहले बाराद्वार डकैती कांड में संलिप्त रहने के आरोप में भारतीय पुलिस सेवा 1992 बैच के अधिकारी राजकुमार देवांगन को 11 साल 6 महीने 13 दिन पहले ही सेवानिवृत्ति दे दी गई. किसी दागी आईपीएस पर देश की यह सबसे बड़ी कार्रवाई बताई जा रही है. गृह विभाग के प्रमुख सचिव बीवीआर सुब्रमण्यम ने केंद्रीय गृह मंत्रालय के आदेश के बाद यह कार्रवाई की. तत्कालीन पुलिस अधीक्षक राजकुमार देवागन के कार्यकाल के दौरान 1998 में अविभाजित मध्यप्रदेश के बाराद्वार (जांजगीर-चांपा) में 65 लाख रुपए की डकैती हुई थी. शिक्षकों के वेतन की रकम हेडमास्टर से रास्ते में कुछ लोगों ने लूट ली थी. इसमें से कुछ पैसा बाराद्वार के थानेदार नरेंद्र मिश्रा के घर से बरामद हुआ. मिश्रा कुछ महीने जेल में रहे, तो उन्होंने

मुख्य सचिव द्वारा हाईकोर्ट में पेश की गयी दागी अफसरों की सूची

नाम व पद	आरोप	कार्रवाही
1. पी.राघवन (रिटा. प्रमुख सचिव उद्योग एवं वाणिज्य विभाग)	बोराई टेडेसरा में फूड पार्क स्थापना में अनियमितता	विचाराधीन
2. एम.एस.मूर्ति (तत्कालीन सचिव)	अंतर्राष्ट्रीय क्रिकेट स्टेडियम निर्माण में अनियमितता	विचाराधीन
3. टी.राधाकृष्णन (पूर्व अध्यक्ष छत्तीसगढ़ माशिम)	समकक्षता में की गयी अनियमितता	जांच लंबित
4. ओमेगा बूनाईस टोप्पो (संयुक्त सचिव वन-विभाग)	सिकोला में विवादित भूमि पर कब्जे का आदेश पारित	जांच लंबित
5. आलोक अवस्थी (एमडी हस्तशिल्प विकास बोर्ड)	कवर पेज कागज क्रय में अनियमितता	जांच लंबित
6. वीके धुर्वे (संयुक्त सचिव जेल)	सीआईपी विजिट वाइज अग्रिग्रहण भुगतान में गड़बड़ी	जांच लंबित
7. टामन सिंह सोनवानी (मनरेगा अधिकारी)	मनरेगा भुगतान में अनियमितता	जांच लंबित
8. एस.एन.राठौर (अपर कलेक्टर रायपुर)	कर्तव्यों में निर्वहन में लापरवाही	आरोप पत्र जारी
9. आरके देवांगन (पूर्व आईजी नगर सेना)	बाराद्वार थाने में रोजनामचा फाड़ने का आरोप	कार्यवाही पूरी
10. एएम जूरी (एआईजी रायपुर)	पत्नी के रहते बुवती से अवैध संबंध का आरोप	विचाराधीन
11. मयंक श्रीवास्तव (एसपी बिलासपुर)	कांसेस के परिवर्तन यात्रा की सुरक्षा में लापरवाही	विचाराधीन
12. एससी अग्रवाल (अपर प्रबंध संचालक वन-विकास निगम)	स्टेशनरी खरीदी में लाखो की गड़बड़ी	शासन को रिपोर्ट
13. राकेश चतुर्वेदी (संचालक संस्कृति विभाग)	रायपुर डीएफओ रहते आरा मशीन स्वीकृति	रिपोर्ट पेश
14. एससी रहटगावकर (उपवन संरक्षक विकास निगम)	भंडार क्रय नियम का उल्लंघन	जांच पूर्ण
15. हेमंत कुमार पाण्डेय (रिटा.डीएफओ)	उदंती वनमंडल में 214 आरा मशीन की अनुमति	जांच पूरी
16. वी एस लकड़ा (महाप्रबंधक राज्य लघु वनोपज संघ, रायपुर)	कांकेर में पदस्थापना में गड़बड़ी	जांच जारी
17. एस.एस.डी.बड़गैया (डीएफओ,रायपुर)	आय से अधिक संपत्ति अर्जित करने का मामला	प्रतिवेदन प्रस्तुत
18. पीएसएन अग्रवाल (संचालक अचानकमार)	अमरकंटक में अवैध कटाई नहीं रोक पाना	जांच जारी
19. बीएस ध्रुव (निदेशक कांगेर घाटी)	अंबिकापुर में पदस्थापना के दौरान गड़बड़ी	जांच जारी
20. सीएस तिवारी (उप संचालक हाथी रिजर्व)	कवर्धा में पदस्थापना के दौरान गड़बड़ी	जांच पूरी
21. आरके तिवारी (डीएफओ मुंगेली)	खैरागढ़ में पदस्थापना के दौरान गड़बड़ी	प्रतिवेदन प्रस्तुत
22. एम गोविन्द राव (डीएफओ गरियाबंद)	नारायणपुर में पदस्थापना के दौरान गड़बड़ी	जांच में विलम्ब
23. एस के पैकरा (डीएफओ बिलासपुर)	कवर्धा में पदस्थापना के दौरान गड़बड़ी	जांच पूरी
24. एसपी रजक (रिटा.डीएफओ)	मनेंद्रगढ़ में पदस्थापना के दौरान गड़बड़ी	जांच में विलम्ब
25. वीपी सिंह (अधीक्षक अचानकमार)	मनरेगा में गड़बड़ी	जांच जारी
26. जीआर चुरेंद्र (कलेक्टर सूरजपुर)	राजिम में विधि विरुद्ध आदेश पारित किया	जांच जारी

* हाईकोर्ट में पेश सूची को जहा यथावत दिया जा रहा है, कुछ अधिकारियों के प्रभार बदले जा चुके हैं.

एसपी देवांगन पर भी डकैती में संलिप्त होने का इशारा किया. इसके बाद सरकार ने देवांगन को सस्पेंड कर दिया. महकमे ने 14 साल बाद 2012 में चार्जशीट इश्यू की. देवांगन के जवाब से संतुष्ट न होने पर सरकार ने विभागीय जांच की अनुशंसा की. उन्हें पुलिस मुख्यालय से हटाकर आईजी होमगार्ड नियुक्त किया गया था. पीएचक्यू के आला अधिकारियों के मुताबिक देवांगन पर यूएन मिशन में पदस्थापना के दौरान देश की छवि खराब करने का मामला भी था. आरोप था कि शांति सेना में कोसोवो-बोस्निया में उन्होंने आर्थिक अनियमितता की. वे तय समय-सीमा से ज्यादा रुके. लाखों रुपयों के आईएसडी कॉल किए और जब लौटे तो संस्थान का कुछ सामान भी साथ ले आए. शिकायत मिलने पर केंद्रीय गृह मंत्रालय ने देवांगन के कार्यकाल की जांच करवाई. सुब्रमण्यम ने बताया कि देवांगन को ऑल इंडिया सर्विस डेट कम रिटायरमेंट बेनिफिट (डीसीआरबी) 1958 के नियम 16(3) के प्रावधानों के तहत जनहित में सेवानिवृत्ति दी गई है.

इस कार्रवाई के बाद अब बिलासपुर के तत्कालीन आईजी पवनदेव पर भी गाज गिरने की संभावना है. पवनदेव पर एक महिला आरक्षक से लैंगिक उत्पीड़न का आरोप है. देव भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारी हैं और उन पर सख्त कार्रवाई के लिए केन्द्रीय स्तर पर फ़ैसला होगा. इसलिए जांच रिपोर्ट में दोषी पाये जाने पर राज्य सरकार द्वारा केन्द्र सरकार को कार्रवाई संबंधी सिफारिश भेजी जा सकती है. यदि देव के खिलाफ कठोर कार्रवाई न करते हुए स्थानीय स्तर पर अन्य कोई कार्रवाई की जानी होगी, तो फ़ैसला राज्य सरकार ही कर सकती है. इस समय केन्द्र सरकार काफी सख्त है. केन्द्र की सख्ती की वजह से ही हाल ही में आईजी राजकुमार देवांगन को अयोग्य मानकर हटाया गया है. मुख्यमंत्री डॉ.रमन सिंह पहले ही प्रशासनिक कसावट का उद्घोष कर चुके हैं. चुनाव में अब दो साल से कम का वक्त बचा है. ऐसी स्थिति में कोशिश यही होगी कि जितने भी दागी अफसर हैं, उनके मामलों में तेज गति से फ़ैसले लिये जायें.

हाईकोर्ट ने भी दिया है दागी अफसरों पर कार्यवाही का आदेश

प्रदेश के 24 से ज्यादा आईएएस, आईपीएस व भारतीय वन सेवा के अफसरों के खिलाफ आर्थिक अनियमितता और घोटाले के आरोप लगने तथा लोक आयोग की जांच में शिकायत की पुष्टि के बाद भी दोषियों पर कार्रवाई नहीं हुई. इसे लेकर दाखिल की गई एक जनहित याचिका पर सुनवाई करते हुए बिलासपुर हाईकोर्ट ने छत्तीसगढ़ सरकार को दागी अफसरों के खिलाफ तय समय सीमा के भीतर कार्रवाई करने के आदेश दिए हैं. हाईकोर्ट के आदेश के बाद प्रदेश के दागी अधिकारियों पर कार्रवाई तय मानी जा रही है. मुख्य सचिव ने कोर्ट में इनकी सूची और उन पर की जा रही कार्रवाई की जानकारी शपथ-पत्र के साथ सौंप दी है. राज्य सरकार द्वारा दागी अधिकारियों के खिलाफ सालों से जांच की जा रही है, ऐसे में कई अधिकारी सेवानिवृत्त भी हो चुके हैं. जिनमें पूर्व प्रमुख सचिव उद्योग एवं वाणिज्य विभाग पी. राघवन, पूर्व सचिव एमएस मूर्ति, टी. राधाकृष्णन, आईजी आरके देवांगन, पूर्व डीएफओ हेमंत कुमार पांडेय व एसपी रजक शामिल हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

www.kamalmorarka.com

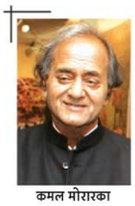

कमल मोरारका

शासन करने के लिए परिपक्वता की आवश्यकता होती है

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प रोजाना आदेश जारी कर रहे हैं. अमेरिकी राष्ट्रपति इतना शक्तिशाली होता है कि उसके हर फैसले का दुनिया भर में संज्ञान लिया जाता है. लेकिन हमें समझना चाहिए कि अमेरिकी राष्ट्रपति अमेरिका के हितों को साधने के लिए चुना जाता है न कि किसी दूसरे देश के हितों को. यदि वे मैक्सिको के साथ के जुड़े मामलों से अपने तरीके से निपटना चाहते हैं, यदि वे पाटा, नफ्ता समझौते को समाप्त करना चाहते हैं, तो वे कर सकते हैं. इसमें सुधार के लिए उनके पास चार साल का समय है. अमेरिका में हमने देखा है कि कोई भी राष्ट्रपति आता है, तो व्यवस्था में 10-15 फीसद से अधिक अंतर नहीं ला सकता, क्योंकि अधिकतर व्यवस्था निर्धारित है. अपनी तमाम इच्छाओं के बावजूद ओबामा इराक़ से अपने सैनिकों को बाहर नहीं निकाल पाए थे.

हफ्ते-दर-हफ्ते राजनीतिक संवाद का स्तर लगातार गिरता जा रहा है. अब यह कहा जा रहा है कि शरद पवार को पद्मविभूषण इसलिए दिया गया है, क्योंकि भाजपा चाहती है कि वो उसके प्रति अपना रवैया नर्म कर लें. ताकि महाराष्ट्र में शिवसेना के समर्थन वापस लेने की स्थिति में एनसीपी का समर्थन लेकर भाजपा सत्ता में बनी रहे. यह बहुत दुखद टिपण्णी है. शरद पवार का राजनीतिक जीवन इतना लम्बा है कि वे अपनी योग्यता के आधार पर इस सम्मान के हकदार हैं. यह कहना गलत है कि भाजपा अवार्ड के जरिए उनका समर्थन हासिल करने के लिए उन्हें खुश कर रही है. लेकिन यह ऐसा समय है, जिसमें कोई यह विश्वास नहीं कर सकता कि सरकार बिना किसी मतलब के कुछ कर सकती है. बहरहाल, यदि खुदा-न-खास्ता शिव सेना महाराष्ट्र में समर्थन वापस ले लेती है, तो यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण होगा यदि भाजपा को सत्ता में रखने के लिए एनसीपी अपना समर्थन दे. यह महबूबा मुफ़्ती और भाजपा के कश्मीर गठबंधन की तरह एक बड़ा अनैतिक गठबंधन होगा. लेकिन चंद मंत्रिपदों और चंद सुविधाओं के लिए आज कल कुछ भी हो सकता है.

इस हफ्ते की अच्छी खबर यह रही कि सुप्रीम कोर्ट ने गोकशी के मामले में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया है. देश में कानून का राज है. कुछ राज्य ऐसे हैं जहां गोकशी पर पाबंदी नहीं लगाई जा सकती है, क्योंकि वहां बहुसंख्यक आबादी मांसाहारी है, जैसे कि पूर्वोत्तर के राज्य या गोवा. यहां तक कि महाराष्ट्र, गुजरात जैसे राज्यों की सरकारों ने यह महसूस किया कि गोकशी पर पाबंदी लगाई जा सकती है, लेकिन इसे लागू करना मुश्किल है, क्योंकि बीफ बहुत सारे लोगों का बुनियादी आहार है. हम हिन्दू या परंपरावादी लोग इसे पसंद नहीं कर सकते हैं. लेकिन क्या हुआ, मुंबई में बीफ पर पाबंदी लगा दी गई और सभी अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंस गोवा में हस्तांतरित हो गए हैं. यह किस तरह का मजाक है. आप विदेशियों को बीफ परोसते हैं. यह सोचना चाहिए कि कांग्रेस विरोधी भावना के चलते भाजपा को बहुत विश्वास के साथ चुना गया था. अब सरकार को सत्ता में आए लगभग तीन साल हो गए हैं और शायद उन्हें एहसास हो रहा है कि भारत जैसे विशाल और विविधता वाले देश पर शासन करने के लिए परिपक्वता की आवश्यकता है. बिना सोच-विचार के फैसले से काम नहीं चलेगा.

> सुप्रीम कोर्ट ने गोकशी के मामले में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया है. देश में कानून का राज है. कुछ राज्य ऐसे हैं जहां गोकशी पर पाबंदी नहीं लगाई जा सकती है, क्योंकि वहां बहुसंख्यक आबादी मांसाहारी है, जैसे कि पूर्वोत्तर के राज्य या गोवा. यहां तक कि महाराष्ट्र, गुजरात जैसे राज्यों की सरकारों ने यह महसूस किया कि गोकशी पर पाबंदी लगाई जा सकती है, लेकिन इसे लागू करना मुश्किल है, क्योंकि बीफ बहुत सारे लोगों का बुनियादी आहार है.

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प रोजाना आदेश जारी कर रहे हैं. अमेरिकी राष्ट्रपति इतना शक्तिशाली होता है कि उसके हर फैसले का दुनिया भर में संज्ञान लिया जाता है. लेकिन हमें समझना चाहिए कि अमेरिकी राष्ट्रपति अमेरिका के हितों को साधने के लिए चुना जाता है न कि किसी दूसरे देश के हितों को. यदि वे मैक्सिको के साथ के जुड़े मामलों से अपने तरीके से निपटना चाहते हैं, यदि वे पाटा, नफ्टा समझौते को समाप्त करना चाहते हैं, तो वे कर सकते हैं. इसमें सुधार के लिए उनके पास चार साल का समय है. अमेरिका में हमने देखा है कि कोई भी राष्ट्रपति आता है, तो व्यवस्था में 10-15 फीसद से अधिक अंतर नहीं ला सकता, क्योंकि अधिकतर व्यवस्था निर्धारित है. अपनी तमाम इच्छाओं के बावजूद ओबामा इराक़ से अपने सैनिकों को बाहर नहीं निकाल पाए थे. स्वास्थ्य के क्षेत्र में उन्होंने ओबामा केयर पेश किया था, जो एक बड़ा फैसला था और अब ट्रम्प उसके बदले में कोई अन्य नीति लाना चाहते हैं. लेकिन जो भी अमेरिका का राष्ट्रपति होगा वो अमेरिका के हित में काम करेगा. यदि वे आतंकवादियों और मुस्लिम प्रवासियों को अमेरिका में नहीं आने देना चाहते हैं, तो वे ऐसा कर सकते हैं. वे चाहते हैं कि अमेरिकी नौकरियां सुरक्षित की जाएं, तो वे कर सकते हैं. इसी वजह से भारत में डर है कि एचवनबी वीज़ा में कमी की जा सकती है. उन्हें ऐसा करने का अधिकार है. अभी इस पर कोई टिपण्णी करना जल्दबाज़ी होगी. अभी उन्हें अपना कार्यभार संभाले एक हफ्ता भी नहीं हुआ है. मुझे नहीं मालूम कि उनपर इतनी टिपण्णी क्यों हो रही है. हमें फ़िलहाल इंतज़ार करना चाहिए. लेकिन वे जो भी फैसले लेंगे, निश्चित रूप से उसका असर पूरे विश्व में देखा जाएगा. सबसे बड़ी बात यह है कि उनकी चीन की नीति क्या रहती है. अगर वे वाकई चीन के विरुद्ध हो जाते हैं, तो यह पूरी दुनिया को प्रभावित करेगा. इसमें व्यापार और अर्थव्यवस्था सभी शामिल होंगे. देखते हैं, आगे क्या होता है. ■

feedback@chauthiduniya.com

कोलकाता डायरी

कोलकाता में कश्मीर का समर्थन

शुजात बुखारी

कश्मीरियों के आत्मनिर्णय के अधिकार का सम्मान करो, अफ्सपा हटाओ. यदि किसी भारतीय शहर में इस तरह का कोई साइन बोर्ड दिखाई देगा, तो निश्चित रूप से आप कुछ समय के लिए हैरानी में पड़ जाएंगे. इसका कारण यह है कि पूरे भारत में कश्मीर को लेकर यह धारणा है कि कश्मीरी आतंकवादी होते हैं और उनकी समस्याओं पर ध्यान नहीं दिया जा सकता. घाटी में लोगों के साथ जो हो रहा है उसका पूछना ही क्या. बहरहाल, यह वो कोलकाता है, जिसने अभी तक राष्ट्रवाद की नई परिभाषा को नहीं अपनाया है.

आत्मनिर्णय के अधिकार का समर्थन जादवपुर विश्वविद्यालय छात्र संघ के चुनाव प्रचार का हिस्सा था. यहां नोटबंदी और मोदी की गलत नीतियों के मुद्दों के अलावा कश्मीरियों के राजनीतिक अधिकारों के लिए स्पष्ट समर्थन दिखा. एक छात्र कार्यकर्ता का कहना था कि हां, हम मानते हैं कि कश्मीरियों को उनका अधिकार दिया जाना चाहिए. यह एक लोकतांत्रिक अधिकार है और भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है... वहां (कश्मीर में) बल प्रयोग का उल्टा असर हुआ है.

चूंकि पश्चिम बंगाल में ममता बनर्जी के नेतृत्व में एक गैर-भाजपा सरकार है, इसलिए वहां धर्मनिरपेक्ष राजनीति के लिए ज़मीन तंग नहीं हुई है. यह राज्य परंपरागत रूप से वामपंथियों का गढ़ रहा है, जहां तीन दशक तक उनका शासन रहा. लिहाज़ा कोलकाता में कश्मीरियों के लिए समर्थन आश्चर्य की बात नहीं है. लेकिन इस मुद्दे का किसी चुनाव अभियान का हिस्सा बनना महत्वपूर्ण है. पड़ोसी उत्तर-पूर्वी राज्यों की तरह यहां भी अफ्सपा का कड़ा विरोध है. जम्मू-कश्मीर में 1990 के बाद से अफ्सपा का विरोध होता आया है. दूसरे राज्यों के लोगों की तरह पश्चिम बंगाल में भी लोग कश्मीर की मौजूदा स्थिती से नावाकिफ़ हैं, लेकिन उनके मन में कश्मीरियों के खिलाफ कोई दुर्भावना नहीं है. छात्रों और शिक्षकों के साथ बातचीत में मानवाधिकारों के प्रति उनकी चिंता ज़ाहिर हो जाती है. कश्मीर के बारे में आम तौर पर यही पूछा गया- हमें ज्यादा पता नहीं है, कृपया हमें वहां के बारे में अधिक जानकारी दीजिए. कश्मीरियों के अधिकारों के लिए यहां छात्रों का खुला समर्थन बाकी के देश के लिए एक सबक है कि कैसे दूसरों के लोकतांत्रिक अधिकारों का सम्मान करने की आवश्यकता है.

कोलकाता में कश्मीर की हालत पर संगोष्ठी और वार्ता का आयोजन अक्सर होता रहा है. मीरवाइज़ उमर फ़ारूक़, यासीन मलिक और स्वर्गीय अब्दुल गनी लोन जैसे प्रमुख नेताओं ने कोलकाता का दौरा किया है. प्रसिद्ध सैटरडे क्लब में एक अग्रणी ट्रैक-टू कार्यकर्ता ओपी शाह ने मेरी वहां मेजबानी की है. वहां इस मामले में दिलचस्पी रखने वाले नागरिकों के ग्रुप के साथ बातचीत काफी उत्साहवर्धक रही थी. कश्मीरियों और उनकी परेशानियों के लिए बंगाल में सहानुभूति की मजबूत भावना है. शायद इस वक्त जरूरत इस बात की है कि भारतीय जनता (जो अंधराष्ट्रवादी मीडिया और सरकार की नीति के अनुकूल संवाद से प्रभावित हैं) तक अधिक से अधिक अपनी बात पहुंचाई जाए.

दक्षिणपंथ की पैठ

मैंने जादवपुर यूनिवर्सिटी में राष्ट्रवाद और मीडिया विषय पर चौथा संदीप्ता चटर्जी स्मारक व्याख्यान पेश किया. राष्ट्रीय मीडिया द्वारा कश्मीर की कवरेज मेरे व्याख्यान का हिस्सा था. संदीप्ता चटर्जी एक नौजवान और मेधावी पत्रकार थीं, जिनकी कुछ साल पहले मृत्यु हो गई थी. स्कूल ऑफ़ मीडिया ने उनके सम्मान में एक लेक्चर सीरिज शुरू की है. मुझे बताया गया कि दक्षिणपंथी छात्र संगठन अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् (एबीवीपी) ने मेरे लेक्चर में व्यवधान डालने की कोशिश की थी, लेकिन कैंपस में वामपंथी राजनीति के वर्चस्व के कारण एबीवीपी अपने मंसूबों में कामयाब नहीं हो पाया, हालांकि व्याख्यान स्थल पर उसके कार्यकर्ता मौजूद थे. कई छात्रों और शिक्षकों ने मुझसे कहा कि यह उनके लिए बहुत चिंता की बात है कि एबीवीपी यूनिवर्सिटी में दाखिल हो गई है और इस साल 18 जनवरी को हुए छात्र संघ चुनाव में पहली बार उसने अपने उम्मीदवार भी खड़े किए. दरअसल भाजपा और उसके सहयोगी संगठन राज्य में अपनी पैठ बनाने की पूरी कोशिश कर रहे हैं और आरएसएस एक ख़ामोश आन्दोलन चला रहा है. 14 जनवरी को जब आरएसएस ने कोलकाता में एक हिन्दू कांफ्रेंस आयोजित करने की घोषणा की, तो ममता बनर्जी सरकार और आरएसएस के बीच एक दिलचस्प टकराव सामने आया. जब पुलिस ने कांफ्रेंस करने की अनुमति नहीं दी, तो हाईकोर्ट को हस्तक्षेप करना पड़ा और आरएसएस को अनुमति मिल गई. कांफ्रेंस को संबोधित करते हुए आरएसएस प्रमुख मोहन भगवत ने हिन्दू एकता बनाने पर बल दिया.

भाजपा ने पश्चिम बंगाल में धीरे-धीरे अपना वोट बैंक बढ़ा लिया है. पश्चिम बंगाल ने लंबे समय तक भाजपा के लिए अपने दरवाज़े बंद रखे थे. पार्टी की स्थापना के बाद

> मुसलमान विकास के सभी मानकों पर न सिर्फ पिछड़े रहे, बल्कि सामाजिक तौर पर भी उन्हें अलग-थलग रखा गया है. भले ही मुसलमानों से ममता की नजदीकी की आलोचना मुस्लिम तुष्टिकरण के रूप में की जा रही है. लेकिन ममता ने मुसलमानों की मदद कर उनकी स्थिति में सुधार किया और फिर उनका विश्वास हासिल किया है. यही वजह है कि उन्हें आरएसएस और भाजपा का गुस्सा झेलना पड़ा है, जो उन्हें मुमताज़ बेगम कह कर बुलाते हैं.

पहली बार पिछले विधानसभा चुनावों में पार्टी के तीन उम्मीदवार चुने गए. 2011 के विधानसभा चुनाव में भाजपा का वोट प्रतिशत महज़ चार फीसद था, जो 2014 के लोकसभा चुनाव में बढ़कर 17 फीसद हो गया था, लेकिन फिर 2016 के विधानसभा चुनाव में घट कर यह 10 फीसद हो गया. दरअसल, 2014 में पार्टी के मत प्रतिशत में उछाल को पूरे देश में व्याप्त मोदी लहर से जोड़ कर देखा गया था. बहरहाल, यह स्थिति पश्चिम बंगाल में बदलते हुए चुनावी हकीक़त को उजागर करती है, जहां ममता बनर्जी के विरोध के बावजूद दक्षिणपंथी राजनीति कामयाबी के साथ अपने लिए ज़मीन तलाश रही है.

मुसलमानों का सवाल

पश्चिम बंगाल में मुसलमानों की आबादी लगभग 30 फीसद है, लेकिन सामाजिक और आर्थिक तौर पर वे पिछड़े हुए हैं. भले ही ममता बनर्जी की वजह से मुसलमानों का प्रतिनिधित्व लोकसभा में (54 में से 5) और विधानसभा में (295 में से 60) बेहतर हुआ है, लेकिन उनकी सामाजिक हैसियत में कोई बड़ा बदलाव नहीं हुआ है. मुस्लिम बुद्धिजीवी बहरूहीन के मुताबिक एक लंबे समय तक मुसलमान वामपंथ का वोट बैंक रहे, लेकिन उनके लगातार समर्थन के बावजूद वामपंथी सरकार ने उन्हें निराश किया और अपने 34 वर्ष के कार्यकाल में मुसलमानों की स्थिति में बदलाव के लिए बहुत कम काम किया.

नोबेल पुरस्कार विजेता प्रो. अमर्त्य सेन ने 2016 में लिविंग रियलिटी ऑफ़ मुस्लिम्स इन बंगाल रिपोर्ट जारी करते हुए कहा था- हक़ीक़त यह है कि पश्चिम बंगाल में मुसलमान अत्यधिक गरीब और सामाजिक तौर पर पिछड़े हैं, जो इस रिपोर्ट को प्रासंगिक बना देता है. प्रो. सेन आगे कहते हैं कि शिक्षा और स्वास्थ्य तक मुसलमानों की पहुंच राज्य के औसत से बहुत कम है. मुसलमान विकास के सभी मानकों पर न सिर्फ पिछड़े रहे, बल्कि सामाजिक तौर पर भी उन्हें अलग-थलग रखा गया है. भले ही मुसलमानों से ममता की नजदीकी की आलोचना मुस्लिम तुष्टीकरण के रूप में की जा रही है. लेकिन ममता ने मुसलमानों की मदद कर उनकी स्थिति में सुधार किया और फिर उनका विश्वास हासिल किया है. यही वजह है कि उन्हें आरएसएस और भाजपा का गुस्सा झेलना पड़ा है, जो उन्हें मुमताज़ बेगम कह कर बुलाते हैं. यहां हिंदू राष्ट्रवादी अपनी राजनीति चमकाने के लिए मुस्लिम तुष्टिकरण को प्रेरक के रूप में इस्तेमाल कर रहे हैं. लेकिन ममता बनर्जी के धैर्य और संकल्प को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि आरएसएस और बीजेपी को यहां सत्ता तक पहुंचने में लंबा समय लगेगा. ममता बनर्जी अपनी 'तानाशाही' शैली के बावजूद बंगाल में परिवर्तन के कारक के रूप में देखी जाती हैं. ■

-लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

क्या लोकतंत्र का यह स्वरूप नैतिक और संविधान सम्मत है!

जैसे-जैसे आजाद हुए समय बीतता जा रहा है, वैसे-वैसे ऐसा लगता है कि पुराने लोग देवताओं के समान थे और आज के ज़माने के लोग कैसे देववृत्ति का अपमान करें, इसी होड़ में लगे हुए हैं. पिछले राजनेता चुनाव प्रचार में शालीनता, विरोधी का सम्मान, आमने-सामने मिलें तो कम से कम नमस्ते करें, ये सारी चीजें अब लगता है इतिहास की वस्तु हो जाएगी. अगर कभी कोई घटनाओं को लिखेगा, तब पता चलेगा कि जिन्हें हम कभी विलेन मानते थे, वो आज के लोगों के सामने हीरो की श्रेणी में खड़े हुए हैं. उत्तर प्रदेश, पंजाब, गोवा में चुनाव प्रचार चल रहा है, लेकिन उत्तर प्रदेश में चुनाव प्रचार की जो शैली सामने आ रही है, वो सचमुच चिंतित करने वाली है.

एक घटना मुझे याद आती है. पंडित जवाहरलाल नेहरू चुनाव लड़ रहे थे और उनके मुक़ाबले प्रभुदत्त ब्रह्मचारी उम्मीदवार थे. प्रभुदत्त ब्रह्मचारी और जवाहरलाल नेहरू जहां आमने-सामने होते थे, एक दूसरे को नमस्ते करते थे और कुछ ही क्षणों के बाद अपनी-अपनी सभाओं में जाकर एक-दूसरे पर घनघोर राजनीतिक प्रहार करते थे. उन प्रहारों में कहीं पर भी व्यक्तिगत द्वेष नहीं होता था. प्रभुदत्त ब्रह्मचारी ने लिखा है कि मैं जा रहा था और वहां पर पंडित जी का क़ाफिला रुका था. मैं भी वहां देखने के लिए रुक गया कि वहां पंडित जी क्या कर रहे हैं? पंडित जी को जैसे ही पता चला, उन्होंने मुझे बुलवाया. उस समय पंडित नेहरू खाना खा रहे थे. प्रभुदत्त ब्रह्मचारी को उन्होंने जबरन अपने पास बिठा लिया और अपने साथ खाना खाने का निमंत्रण दिया. प्रभुदत्त जी ने लिखा है, मैंने देखा पंडित जी पहले रोटी खा लेते थे और उसके बाद दाल पीते थे. प्रभुदत्त ब्रह्मचारी को आश्चर्य हुआ कि पंडित जी ऐसा क्यों कर रहे हैं? क्या इन्हें खाना खाना भी नहीं आता? यह आज़ादी के बाद की घटना है. प्रभुदत्त ब्रह्मचारी ने लिखा है, पंडित जी ने उन्हें कहा कि हां, मैं तो इसी तरह खाना खाता हूं. तब प्रभुदत्त ब्रह्मचारी ने उन्हें बताया कि इस तरह रोटी को दाल में डुबोकर खाने से स्वाद बढ़ता है और पाचनशक्ति भी बढ़ती है. पंडित जी ने उसे खाया और इसके बाद पंडित जी रोटी दाल में डुबोकर ही खाने लगे. यह घटना बताती है कि पहले के राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों में कितनी शालीनता होती थी. प्रभुदत्त ब्रह्मचारी की प्रतिक्रिया ये भी बताती है कि ऐसी चीज़ों का कभी राजनीतिक इस्तेमाल नहीं होता. ये घटना उन्होंने अपने संस्मरणों में लिखी है. अगर आज ये घटना हुई होती तो प्रतिद्वंद्वी या अगर जवाहरलाल नेहरू और प्रभुदत्त ब्रह्मचारी आज चुनाव लड़ रहे होते तो वे इस घटना को जवाहरलाल नेहरू की अज्ञानता के रूप में पेश करते. वे सब जगह यह बताते कि ये कैसा उम्मीदवार है, जिसे दाल और रोटी भी खाने नहीं आती है? ये आपका प्रतिनिधित्व कैसे करेगा? क्योंकि आजकल ऐसा ही हो रहा है. अगर प्रियंका गांधी चुनाव प्रचार के लिए निकलने की इच्छा रखती हैं या चुनाव प्रचार करने के लिए प्रियंका गांधी का नाम सामने आता है, तो भारतीय जनता पार्टी के कद्दावर नेताओं को मिर्च क्यों लग जाती है? विनय कटियार को क्यों ये लगता है कि अगर प्रियंका गांधी निकलेंगी तो उनके वोटों पर असर पड़ेगा. इसलिए उन्होंने एक बेहद निम्नस्तर की टिप्पणी की कि प्रियंका गांधी से ज्यादा सुन्दर महिलाएं हैं और हम उन्हें चुनाव प्रचार में उतार सकते हैं. इसके बाद फिर शायद भारतीय जनता पार्टी की ही नेता स्मृति ईरानी की सुन्दरता पर टिप्पणी कर दी.

उत्तर प्रदेश में सभाओं में बाहुबली नेताओं का प्रवेश अपने आप में चिंता जताता है और उनका राजनीतिक महिमामंडन भी बहुत परेशान करता है. हाल में मायावती जी ने प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा कि अंसारी बंधुओं का राजनीति में प्रवेश करना कितना सही और जायज है? उन्होंने ये भी कहा कि अंसारी बंधुओं का कहना है कि उनके खिलाफ जितने मुकदमे हैं, वो रंजिशन लगाए गए हैं. ये भाषा उन्होंने इस तरह बोली, जैसे वे भी इसका समर्थन करती हों. इसके साथ ही मायावती जी ने कई नाम और लिए, जिनमें डीपी यादव, बृजेश पाठक, राजा भैया का नाम शामिल है. उन्होंने कहा कि ये सारे लोग अपराधी हैं और इन्हें तब तक बहुजन समाज पार्टी में नहीं लिया जाएगा, जब तक ये सार्वजनिक रूप से माफी नहीं मांग लेते हैं. मायावती का ये इशारा कि अगर बाहुबली सार्वजनिक रूप से प्रेस कॉन्फ्रेंस कर अपने ऊपर लगाए गए आरोपों पर सफाई दे दें कि उनके खिलाफ सारे आरोप द्वेषवश लगाए गए हैं, उन्होंने कभी ऐसे काम नहीं किए हैं और न आगे वो करेंगे, तो मायावती उन्हें बहुजन समाज पार्टी के टिकट पर विधानसभा चुनाव लड़ाने में कोई संकोच नहीं करेंगी. अखिलेश यादव ने पिछले विधानसभा चुनावों के दौरान एक महत्वपूर्ण बात कही. उन्होंने डीपी यादव के खिलाफ सार्वजनिक बयान दिया. अपने पिताजी के फैसले के खिलाफ डीपी यादव को पार्टी में प्रवेश करने से रोक दिया, तब अखिलेश यादव की इमेज बनी कि यह ऐसा नौजवान नेता है, जो राजनीति के अपराधीकरण के खिलाफ है या राजनीति में बाहुबलियों को प्रवेश नहीं करने देगा. इस बार उन्होंने मुख्तार, अफज़ाल अंसारी और अतीक अहमद का विरोध किया. इसके बावजूद अपराधियों की एक लंबी सूची है, जिसे अखिलेश यादव ने चुनाव में उतार दिया और ये साबित किया कि वे भी दूसरे राजनीतिक दलों से अलग नहीं हैं. हालांकि अखिलेश यादव की चुनाव प्रचार शैली फिलहाल बाक़ी नेताओं से अलग और सभ्यता के दायरे में है. लेकिन क्या सिर्फ इतना काफी है. हमारी चिंता किसी एक उम्मीदवार की भाषा को लेकर नहीं है. हमारी चिंता पूरे राजनीतिक चुनाव प्रचार में शैली, स्वरूप और भाषा को लेकर है क्योंकि इसका नीचे खासकर कार्यकर्ताओं के स्तर पर बहुत गलत प्रभाव पड़ता है.

इन राजनीतिक चुनाव में एक चीज़ और साफ़ दिखाई दी. वो यह कि अब राजनीतिक कार्यकर्ताओं की उम्मीदवारी के क्षेत्र में दावेदारी लगभग समाप्त हो गई है. अगर आप किसी नेता की पत्नी, उनके बेटे, भतीजे हैं, उनका इस हक़ से टिकट मांगने की प्रक्रिया प्रारंभ हुई है, मानो ये उनका जन्मसिद्ध अधिकार है. अगर मैं नहीं रहूंगा, तो मेरा उत्तराधिकारी मेरा बेटा, पत्नी, भाई, बहू या मेरी बेटी को क्यों नहीं जाएगा. ये एक दावे के साथ ऐसे सत्य के रूप में सामने आ रहा है कि परिवारवाद वाला सवाल

> उत्तर प्रदेश में सभाओं में बाहुबली नेताओं का प्रवेश अपने आप में चिंता जताता है और उनका राजनीतिक महिमामंडन भी बहुत परेशान करता है. हाल में मायावती जी ने प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा कि अंसारी बंधुओं का राजनीति में प्रवेश करना कितना सही और जायज है? उन्होंने ये भी कहा कि अंसारी बंधुओं का कहना है कि उनके खिलाफ जितने मुकदमे हैं, वो रंजिशन लगाए गए हैं. ये भाषा उन्होंने इस तरह बोली, जैसे वे भी इसका समर्थन करती हों. इसके साथ ही मायावती जी ने कई नाम और लिए, जिनमें डीपी यादव, बृजेश पाठक, राजा भैया का नाम शामिल है. उन्होंने कहा कि ये सारे लोग अपराधी हैं और इन्हें तब तक बहुजन समाज पार्टी में नहीं लिया जाएगा, जब तक ये सार्वजनिक रूप से माफी नहीं मांग लेते हैं.

अपनी महत्ता खोता जा रहा है. मुलायम सिंह जी के परिवार के लोग चुनाव मैदान में हैं. कुछ लोकसभा के लिए हैं, जो बचे हैं, वो विधानसभा में आ रहे हैं. मायावती जी के यहां परिवारवाद नहीं है क्योंकि उनकी पारिवारिक दावेदारी का ज़िम्मा उनके भाई आनन्द पर है. वे इस बार चुनाव नहीं लड़ रहे हैं, शायद वे इस बार राज्यसभा में जाएंगे. कांग्रेस इसका उदाहरण है और सबसे बड़ा उदाहरण अब भारतीय जनता पार्टी हो रही है.

राजनाथ सिंह के बेटे पंकज सिंह को टिकट देने में जितनी देरी भारतीय जनता पार्टी ने लगाई, उससे ये लगा कि उन्हें जान-बूझकर अपमानित किया जा रहा है. शायद राजनाथ जी के गुस्से को भांपते हुए भारतीय जनता पार्टी ने न केवल उनके बेटे को टिकट दिया, बल्कि बेटे के ससुर यानी राजनाथ सिंह के समधी को भी टिकट दे दिया. ऐसे लोगों की सूची बहुत लंबी है, जो खुद सांसद हैं और उनके बेटे, उनकी बहू या उनकी बेटी चुनाव में खड़े हैं. इस आशा से खड़े हैं कि ये जीतेंगे और राजनीति की वंश परंपरा को आगे बढ़ाएंगे.

अब डॉ. राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण, दीनदयाल उपाध्याय या फिर अटल बिहारी वाजपेयी को बहुत ज्यादा याद करने की आवश्यकता नहीं है. उनसे जुड़े सभी परंपराओं के सवाल को भूल जाना चाहिए और ये मान लेना चाहिए कि भारत भी एक ऐसे लोकतांत्रिक स्वरूप की तरफ बढ़ रहा है, जहां अगले पांच या दस सालों में 100 या 200 परिवार बचेंगे, जिनके बेटे या बेटी या उनका कोई रिश्तेदार इस देश की सत्ता को चलाएगा, चाहे वो विधानसभा या फिर लोकसभा के जरिये हो.

ये स्थिति पाकिस्तान में है. पाकिस्तान में लगभग 150 परिवार ऐसे हैं, जो वहां की सत्ता पर क़ाबिज़ हैं. इधर इस बार किसी भी चुनाव में या दूसरे चुनाव में, वो हर हालत में उन्हीं परिवारों से जुड़े लोगों को वहां की नेशनल या स्टेट असेंबली में भेजता है. हम भी शायद उसी रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं. हम धीरे-धीरे एक दूसरी लोकतांत्रिक व्यवस्था का हिस्सा बनने जा रहे हैं, जो पाकिस्तानी लोकतंत्र से मिलता-जुलता है. देश के लोगों को ये सोचना है कि क्या संविधान निर्माताओं ने लोकतंत्र का यही स्वरूप सोचा था, गांधी जी ने सोचा था, आज़ादी के आन्दोलन में अपनी जान देने वाले या जेल जाने वाले लोगों ने सोचा था. अगर ये नहीं सोचा था, तो हम क्यों शहीदों के सपनों का अपमान कर रहे हैं और क्यों आज़ादी के आन्दोलन में देखे गए सपने की हत्या कर रहे हैं. इस देश के मतदाताओं को देखने की ज़रूरत है और सोचने की ज़रूरत है कि लोकतंत्र का जो स्वरूप हमारे सामने आ रहा है, क्या वो लोकतंत्र का स्वरूप जायज, नैतिक, संविधान सम्मत, संविधान निर्माताओं की आकांक्षाओं के अनुरूप है या हम इन सबको धोखा देकर एक ऐसे लोकतंत्र की तरफ बढ़ रहे हैं, जो हकीकत में लोकतंत्र विरोधी और लोकतंत्र के नाम पर एक सामंतवादी आपराधिक व्यवस्था के निर्माण की नींव बन सकता है. कहना इसलिए जरूरी है, ताकि अगर कहीं पर कोई विवाद हो, बुद्धि हो, समझ हो या लोकतंत्र के प्रति आस्था हो तो वो लोग जो इस प्रक्रिया में लगे हैं, वो अपने क़दम उठा सकें. ■

editor@chauthiduniya.com

'हिंद स्वराज'

> वह बड़ी ग़लत बात है. अगर पार्लियामेंट बांझ न हो तो इस तरह होना चाहिए. लोग उसमें अच्छे से अच्छे मेम्बर चुनकर भेजते हैं. मेम्बर तनख्वाह नहीं लेते. इसलिए उन्हें लोगों की भलाई के लिए (पार्लियामेंट में) जाना चाहिए. लोग खुद सुशिक्षित-संस्कारी माने जाते हैं, इसलिए उनसे भूल नहीं होती, ऐसा हमें मानना चाहिए. ऐसी पार्लियामेंट को अर्जी की जरूरत नहीं होनी चाहिए, न दबाव की. उस पार्लियामेंट का काम इतना सरल होना चाहिए कि दिन ब दिन उसका तेज बढ़ता जाए और लोगों पर उसका असर होता जाए.

इंग्लैंड की हालत

पाठक: आप जो कहते हैं उस पर से तो मैं यही अंदाज लगाता हूं कि इंग्लैंड में जो राज्य चलता है, वह ठीक नहीं है और हमारे लायक नहीं है.

संपादक: आपका यह ख्याल सही है. इंग्लैंड में आज जो हालत है वह सचमुच दयनीय-तरस खाने लायक़ है. मैं तो भगवान से यही मांगता हूं कि हिन्दुस्तान की ऐसी हालत कभी न हो. जिसे आप पार्लियामेंटों की माता कहते हैं, वह पार्लियामेंट तो बांझ और बेसवा है. ये दोनों शब्द बहुत कड़े हैं, तो भी उस पर अच्छी तरह लागू होते हैं. मैंने उसे बांझ कहा, क्योंकि अब तक उस पार्लियामेंट ने अपने आप एक भी अच्छा काम नहीं किया. अगर उस पर ज़ोर-दबाव डालने वाला कोई न हो तो वह कुछ भी न करे, ऐसी उसकी कुदरती हालत है और वह बेसवा है क्योंकि जो मंत्री-मंडल उसे रखे उसके पास वह रहती है. आज उसका मालिक एस्क्विथ है, तो कल बालफर होगा और परसों कोई तीसरा.

पाठक: आपके बोलने में कुछ व्यंग्य है. बांझ शब्द को अब तक आपने लागू नहीं किया. पार्लियामेंट लोगों की बनी है, इसलिए बेशक लोगों के दबाव से ही वह काम करेगी. वही उसका गुण है, उसके ऊपर का अंकुश है.

संपादक: यह बड़ी ग़लत बात है. अगर पार्लियामेंट बांझ न हो तो इस तरह होना चाहिए. लोग उसमें अच्छे से अच्छे मेम्बर चुनकर भेजते हैं. मेम्बर तनख्वाह नहीं लेते. इसलिए उन्हें लोगों की भलाई के लिए (पार्लियामेंट में) जाना चाहिए. लोग खुद सुशिक्षित-संस्कारी माने जाते हैं, इसलिए उनसे भूल नहीं होती, ऐसा हमें मानना चाहिए. ऐसी पार्लियामेंट को अर्जी की जरूरत नहीं होनी चाहिए, न दबाव की. उस पार्लियामेंट का काम इतना सरल होना चाहिए कि दिन ब दिन उसका तेज बढ़ता जाए और लोगों पर उसका असर होता जाए. लेकिन इससे उलटे इतना तो सब कबूल करते हैं कि पार्लियामेंट के मेम्बर दिखावटी और स्वार्थी पाये जाते हैं. सब अपना मतलब साधने की सोचते हैं. सिर्फ डर के कारण ही पार्लियामेंट कुछ काम करती है, जो काम आज किया, वह कल उसे रह करना पड़ता है. आज तक एक भी चीज़ को पार्लियामेंट में ठिकाने लगाया हो, ऐसी कोई मिसाल देखने में नहीं आती. बड़े सवालों की चर्चा जब पार्लियामेंट में चलती है, तब उसके

मेम्बर पैर फैलाकर लेटते हैं या बैठे-बैठे झपकियां लेते हैं. उस पार्लियामेंट में मेम्बर इतने जोरों से चिल्लाते हैं कि सुनने वाले हैरान-परेशान हो जाते हैं. उसके एक महान लेखक ने उसे 'दुनिया की बातूनी' जैसा नाम दिया है. मेम्बर जिस पक्ष अगर कोई मेम्बर इसमें अपवादरूप निकल आये, तो उसकी कमबख्ती ही समझिए. जितना समय और पैसा पार्लियामेंट ख़र्च करती है, उतना समय और पैसा अगर अच्छे लोगों को मिले तो प्रजा का उद्धार हो जाये. ब्रिटिश पार्लियामेंट महज़ प्रजा का खिलौना है और वह खिलौना प्रजा को भारी ख़र्च में डालता है. ये विचार मेरे खुद के हैं, ऐसा आप न मानें. बड़े और विचारशील अंग्रेज़ ऐसा विचार रखते हैं. एक मेम्बर ने तो यहां तक कहा है कि पार्लियामेंट धर्मिष्ठ आदमी के लायक़ नहीं रही. दूसरे मेम्बर ने तो कहा है कि पार्लियामेंट एक 'बच्चा' (बेबी) है. बच्चों को कभी आपने हमेशा बच्चे ही रहते देखा है? आज सात सौ बरस के बाद भी अगर पार्लियामेंट बच्चा ही हो, तो वह बड़ी कब होगी?

पाठक: आपने मुझे सोच में डाल दिया. यह सब मुझे तुरन्त मान लेना चाहिए, ऐसा तो आप नहीं कहेंगे आप बिल्कुल निराले विचार मेरे मन में पैदा कर रहे हैं. मुझे उन्हें हज़म करना होगा. अच्छा, अब 'बेसवा' शब्द का विवेचन कीजिए.

संपादक: मेरे विचारों को आप तुरन्त नहीं मान सकते, यह बात ठीक है. उसके बारे में आपको जो साहित्य पढ़ना चाहिए, वह आप पढ़ेंगे, तो आपको कुछ ख्याल आएगा. पार्लियामेंट को मैंने बेसवा कहा, वह भी ठीक है. उसका कोई मालिक नहीं है. उसका कोई मालिक नहीं हो सकता. लेकिन मेरे कहने का मतलब इतना ही नहीं है. जब कोई उसका मालिक बनता है-जैसे प्रधानमंत्री-तब भी उसकी चाल एक सरीखी नहीं रहती. जैसे बुरे हाल बेसवा के होते हैं, वैसे ही सदा पार्लियामेंट के होते हैं. प्रधानमंत्री को पार्लियामेंट की थोड़ी ही परवाह रहती है. वह तो अपनी सत्ता के मद में मस्त रहता है. अपना दल कैसे जीते इसी की लगन उसे रहती है. पार्लियामेंट सही काम कैसे करे, इसका वह बहुत कम विचार करता है. अपने दल को बलवान बनाने के लिए प्रधानमंत्री पार्लियामेंट से कैसे-कैसे काम करवाता है, इसकी मिसालें जितनी चाहिए उतनी मिल सकती हैं. यह सब सोचने लायक है. ■

दूर तक जाएगी यह मानव शृंखला

सुकान्त

बिहार ने 21 जनवरी को इतिहास रच डाला और यह मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के खाते में दर्ज हुआ है. सूबे की तीन करोड़ से अधिक आबादी ने मानव शृंखला में एक–दूसरे का हाथ थाम 'नशा को ना' कहा, नशा–मुक्त बिहार के आह्वान को सरजमीं पर उतारने का संकल्प लिया. इसमें न उम्र की सीमा रही न धर्म का बंधन. पुरुषों से कहीं कम आधी आबादी रही. सभी रहे, सभी दल और संगठन रहे. सब कुछ नीतीश कुमार की अपेक्षा से अधिक रहा– उन्होंने दो करोड़ लोगों की भागीदारी का अनुमान लगाया था, तीन करोड़ से अधिक लोग शामिल हुए. सवा ग्यारह हजार किलोमीटर की मानव शृंखला तैयार करने का लक्ष्य था, शृंखला बनी ग्यारह हजार चार सौ किलोमीटर की. यह शराब सहित सभी तरह के नशे को नकारने का सबसे बड़ा जन अभियान साबित हुआ है. लोग पचास मिनट तक एक–दूसरे का हाथ थामे खड़े रहे. इस ऐतिहासिक मानव शृंखला को रिकॉर्ड के तौर पर दर्ज करने के लिए इसरो के पांच उपग्रह तैनात रहे. हेलीकॉप्टरों के जरिए फोटोग्राफी की गई. सुरक्षा में ड्रोन लगाए गए. मानव शृंखला के दौरान कई जिलों और कई इलाकों में जगह छोटी पड़ गई और कहीं–कहीं तो एक ही सड़क पर चार–चार लेन बनाने पड़े. दरभंगा, पूर्णिया, सहरसा और तिरहुत प्रमंडलों के अनेक मार्गों पर मानव शृंखला के दौरान स्थानीय सांस्कृतिक वैशिष्ट्य की झलक भी खूब दिखी. महिलाओं और बच्चियों के जोश–जुनून परवान पर थे. इस शृंखला में उन हजारों परिवारों के लोग भी थे, जिनके घरों में शराबबंदी के कारण खुशियां लौट आई हैं. पटना के गांधी मैदान में इस शृंखला में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार और राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद के साथ–साथ बिहार की महागठबंधन सरकार के अनेक मंत्रियों की भागीदारी तो रही ही, बिहार विधानसभा के अध्यक्ष विजय कुमार चौधरी और बिहार विधान परिषद के सभापति अवधेश नारायण सिंह की भागीदारी उल्लेखनीय रही. राज्य सरकार के आला नौकरशाह भी मौजूद थे. भारतीय जनता पार्टी के नेता सुशील कुमार मोदी सहित इसके नेता सीवान में मानव शृंखला में शामिल हुए. जिलों के प्रभारी मंत्रियों, सांसदों, विधायकों को उनके जिलों में ही मानव शृंखला में शामिल होने को कहा गया था, वे वहीं थे. वस्तुतः यह मानव शृंखला समाज परिवर्तन के जज्बे के साथ निष्ठा और प्रतिबद्धता की मुखर अभिव्यक्ति रही. हालांकि यह मानव शृंखला सामाजिक बदलाव के अभियान को रेखांकित करने के लिए तैयार की गई थी, पर इसने बिहार की राजनीति में गहरी और लंबी रेखा खींच दी है.

> मानव शृंखला के सफल आयोजन के साथ नीतीश कुमार ने एकबारगी कई पड़ाव तय कर लिए हैं. अनेक कमियों से भरे और सूबे में शराब के अवैध कारोबार पर अंकुश लगाने में अब तक की विफलता के बावजूद शराबबंदी का मौजूदा कानून, बिहार मद्यनिषेध अधिनियम, के समर्थन में बिहार की कोई एक चौथाई आबादी को इस अभियान के पक्ष में सड़क पर उतार दिया. यह मानव शृंखला उन लोगों और दलों को नीतीश कुमार का जवाब थी, जो शराबबंदी कानून की कुछ धाराओं को लेकर अपनी चिंताएं जाहिर करते रहे.

मानव शृंखला के सफल आयोजन के साथ नीतीश कुमार ने एकबारगी कई पड़ाव तय कर लिए हैं. अनेक कमियों से भरे और सूबे में शराब के अवैध कारोबार पर अंकुश लागने में अब तक की विफलता के बावजूद शराबबंदी का मौजूदा कानून, बिहार मद्यनिषेध अधिनियम, के समर्थन में बिहार की कोई एक चौथाई आबादी को इस अभियान के पक्ष में सड़क पर उतार दिया. यह मानव शृंखला उन लोगों और दलों को नीतीश कुमार का जवाब थी, जो शराबबंदी कानून की कुछ धाराओं को लेकर अपनी चिंताएं जाहिर करते रहे. मानव शृंखला के बाद की प्रेस कॉन्फ्रेंस में परोक्ष तौर पर मुख्यमंत्री ने यह बात कही भी. मानव शृंखला का इतिहास रचने के साथ उन्होंने सभी दलों, नेताओं और समाज के विभिन्न तबके के लोगों को जता दिया कि बिहार के शराबबंदी कानून में कुछ भी गलत नहीं है और इसमें किसी तरह के सुधार की कोई गुंजाइश भी नहीं बचती है. बिहार में शराबबंदी गत एक अप्रैल से लागू हुई और उसके बाद से ही इसमें सुधार की मांग की जा रही है. ऐसी विरोधी दलों के साथ–साथ महागठबंधन में शामिल दलों के अनेक विधायक भी करते रहे हैं. इस मसले पर राजद में भी कई आपत्ति रही. राजद सुप्रीमो भी इस कानून के कई प्रावधानों से सहमत नहीं रहे हैं. नीतीश कुमार को लालू प्रसाद ही नहीं, राजद विधायकों को समझाने में बड़ी मशक्कत करनी पड़ी. सो, विरोधी ही नहीं, उन्हें अपनों को भी जवाब देना था और इसके लिए मानव शृंखला से बेहतर क्या हो सकता था– बगैर हल्दी–फिटकरी के रंग चोखा हो गया. इसका एक और दूरगामी राजनीतिक निहितार्थ है. इसके जरिए नीतीश कुमार ने उन लोगों– राजनीतिक दलों, राजनेताओं, राजनीतिक भाष्यकारों– को भी आईना दिखाने की कोशिश की है, जो विधानसभा चुनावों में महागठबंधन की जीत में उनसे बड़ी राजद सुप्रीमो की भूमिका मानते रहे हैं. उन्होंने यह जताने की कोशिश की है कि बिहार की एक चौथाई आबादी उनकी आवाज पर सड़क पर उतर सकती है. सो आनेवाले महीनों में सूबे की सत्तारूढ़ महागठबंधन की आंतरिक राजनीति में तनाव के लक्षण दिखे तो किसी को अचरज नहीं होना चाहिए. वैसे भी नीतीश कुमार की संपूर्ण राजनीति में छवि बहुत बड़ा प्रेरक तत्व रही है. हालांकि यह बड़ी बात है और किसी राजनेता की प्रतिबद्धता और निष्ठा की अभिव्यक्ति भी है. पर यह अटूट नहीं है तो सवालों का घेरा भी बनाती है. यह समय बताएगा कि मानव शृंखला से निर्मित राजनीतिक माहौल कौन सा स्वरूप ग्रहण करता है. इसके लिए राजनीति को चौकस रहना होगा.

मानव शृंखला को लेकर नीतीश कुमार की राजनीति की सफलता का एक और आयाम है. उन्होंने शराबबंदी की अपनी लाइन पर समर्थन के लिए विपक्ष को आगे आने को विवश कर दिया. एनडीए की नेता भारतीय जनता पार्टी के साथ–साथ राष्ट्रीय लोकसमता पार्टी और लोक जनशक्ति पार्टी भी मानव शृंखला में शामिल हुई. लेकिन पूर्व मुख्यमंत्री जीतनराम मांझी का हिन्दुस्तानी अवाम मोर्चा इससे अलग रहा. मांझी ने साफ कर दिया कि उनकी पार्टी ही नहीं, एनडीए का कोई भी दल शराबबंदी का विरोधी नहीं है. पर इस कानून की कई धाराएं और उप धाराएं 'काले कानून से भी बदतर' हैं. अधिनियम की इन धाराओं के विरोध में एनडीए ने अगस्त में विधान मंडल के दोनों सदनों की कार्यवाही का बहिष्कार किया था और इसे नेताओं–विधायकों ने राजभवन मार्च कर इसे मंजूरी न देने की अपील की थी. इन 'काले कानूनों' के रहते इसका कैसे समर्थन किया जा सकता है? मानव शृंखला का भाकपा (माले) ने भी समर्थन नहीं किया. पर इससे क्या फर्क पड़ता है? अधिनियम के 'काले कानूनों' का सबसे अधिक विरोध भाजपा ने किया था, वह राज्यपाल के पास तो गई ही, सड़क पर भी उतरी. और राजनीति की विडंबना देखिए, सबसे पहले भाजपा ने ही मानव शृंखला का समर्थन किया, उसमें शामिल होने की घोषणा की. लोजपा ने ताड़ी के कारोबार को शराबबंदी के इस अधिनियम में शराब के समान पेश करने के विरोध में अभियान चलाया था. ताड़ी को तो कानून में कोई छूट नहीं मिली, पर लोजपा मानव शृंखला का अंग बन गई. हालांकि उसकी यह सहमति कई अगर–मगर के साथ थी और भाजपा के एकतरफा फैसले से वह खुश नहीं थी. लोजपा सुप्रीमो रामविलास पासवान ने भाजपा के स्डैंड के बारे में पूछे जाने पर कहा भी था कि कोई भी निर्णय घटक दलों से राय–विचार के बाद ही लेना चाहिए. पर, भाजपा का संकट दूसरा ही रहा. प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने सार्वजनिक मंच से बिहार में शराबबंदी की भूरि–भूरि प्रशंसा की और सामाजिक परिवर्तन के इस अभियान के लिए नीतीश कुमार का अभिनंदन किया. इससे और जो हो, भाजपा के केंद्रीय नेतृत्व का नीतीश प्रेम तो जाहिर हो ही गया. इस बरअक्स, प्रादेशिक नेतृत्व इतनी जल्दी कैसे अपना स्टैंड बदल लेगा, जबकि पिछले कई महीनों से नीतीश सरकार के विरोध का उसका बड़ा मुद्दा शराबबंदी अधिनियम के काले कानून ही रहे हैं. इसीलिए मानव शृंखला में शामिल बिहारी भाजपा नेताओं के दो सुर रहे–समर्थन के बावजूद उत्कट नीतीश विरोध और दूसरा निरामिष विरोध के साथ समर्थन. आनेवाले महीनों में भाजपा की राजनीति जिस करवट बैठे, पर नीतीश कुमार ने बिहार की भाजपा को नख–दंत और विषहीन तो साबित कर ही दिया. यह उनकी भावी राजनीति को नई ताकत देगी, दिशा भी दे सकती है. इतना ही नहीं, इससे महागठबंधन के भीतर शक्ति संतुलन भी प्रभावित होगा.

मानव शृंखला की ऐतिहासिक सफलता कई अपेक्षाओं को जन्म देती है. कोई साढ़े ग्यारह हजार किलोमीटर लंबी तीन करोड़ से अधिक लोगों की मानव शृंखला की प्रस्तुति सहज और सबके बूते की बात नहीं है. नीतीश कुमार को बिहार के आमजन से मिले अकूत स्नेह ने उन्हें इतिहास रचने की ताकत दी है. सूबे की जनता ने नायक तो उन्हें कई बार बनाया है और हर बार लोगों की नई अपेक्षा रही, तो नीतीश कुमार की भी बहुमुखी जिम्मेवारी रही. इस बार एक सूत्री अपेक्षा है: नशा–मुक्त बिहार. यहां शराबबंदी कानून कोई दस महीने से लागू है, जो है, वह काफी कठोर कानून है.

सूबे में शराबबंदी कानून के उल्लंघन पर मृत्युदंड तक की सजा का प्रावधान है. बलात्कार और एके–47 जैसे हथियार रखने की सजा से ज्यादा कठोर सजा शराब रखने, शराब पीने और शराबी को संरक्षण देने की है. विधान मंडल के दोनों सदनों के सभी सदस्यों ने शराब का सेवन न करने, इसके सेवन को प्रश्रय न देने और लोगों को इसके सेवन से दूर रहने के लिए प्रेरित करने का संकल्प लिया था. ऐसा ही संकल्प अन्य जनप्रतिनिधियों ने भी लिए, सूबे के सरकारी अधिकारी और कर्मचारियों ने लिए...सभी ने लिए. फिर भी, राजनेता शराब रखने के जुर्म में पकड़े जा रहे हैं, शराब के नशे में झूमते विधायक मीडिया के सामने पेश होते हैं, पुलिस के जवान नशे में टुन्न होकर बदतमीजी करते हैं, थानों के मालखानों से शराब बरामद हो रही है, जिला समाहरणालय में शराब के सेवन करते कर्मचारी–अधिकारी पकड़े जाते हैं. राजनेताओं, जिनमें मंत्री और विधायक शामिल हैं, के संरक्षण में शराब माफिया के सिंडिकेट निर्विघ्न अपना काम करते हैं, पुलिस अधिकारियों के हाथ काट लेते हैं. सूबे में अवैध शराब के कारोबारी को उच्च स्तर से संरक्षण मिल रहा है. ऐसे में किसी भी कानून पसंद बिहारी के मन में सवाल है, उस संकल्प का क्या हुआ जो कोई नौ महीने पहले सभी से लिया गया था? इसका जवाब कोई नहीं दे रहा है– बिहार सरकार न महागठबंधन के नेता–प्रवक्ता. और अब कोई साढ़े ग्यारह हजार लंबी मानव शृंखला कुछ ऐसे ही सवाल कर रही है–मौन की भी आखिर कोई मुखरता तो होती ही है! यह सच्चाई है कि कठोर कानून के बावजूद बिहार में शराब सहज उपलब्ध है. शराब की दुकान नहीं है, पर शराबी के घर उसकी जरूरत व हैसियत के हिसाब से शराब पहुंच रही है. पटना गांधी मैदान में मानव शृंखला में शामिल एक किशोरी ने कहा, 'पिछली रात पड़ोसी कोई आधी रात में शराब पीकर घर आया था और हंगामा कर रहा था'. एक अन्य किशोरी ने बताया, 'पिता जी अब भी रोज शराब पीकर आते हैं. इन्हें शराब तो मिल रही है. मानव शृंखला में सूबे के सभी उम्र की आम भागीदारी रही, पर किशोर–किशोरियों सहित युवा बिहारियों और आधी आबादी ने जिस उत्साह और संख्या में भागीदारी की है वह उल्लेखनीय रही. यह भागीदारी सरकार के दावों को जमीनी हकीकत में बदलते देखना चाहती है. यह बिहार की सत्ता, जिसकी कमान नीतीश कुमार के हाथ है, के लिए मामूली चुनौती नहीं है.■

feedback@chauthiduniya.com

ईम्पोर्टेड केमिकल से तैयार, लैब टेस्टेड

पेन्ट डिस्टेम्पर
कोई भी हो
वॉल पुट्टी केवल ईटालियन वॉल पुट्टी

Laboratory Tested
Please Compare Lab Report

Made from Imported Chemicals
ईटालियन
व्हाईट
वॉल पुट्टी
Slight Costly but Superior

लैब रिपोर्ट अवश्य चेक करें ।
लैब रिपोर्ट हमारे सभी डीलर्स के यहां उपलब्ध है

प्रखण्ड स्तर या अपने क्षेत्र हेतू सप्लायर / डीलरशिप के लिए सम्पर्क करें ।
Mob : 9431234022 / 9435040133 Mail ID : mcwaterproof@yahoo.com

सीमेन्ट की ताकत बढ़ाए, घर को मजबुत बनाऐ

सीमेन्ट
कोई भी हो परन्तु
वाटरप्रूफिंग केमिकल सिर्फ

मिस्टर केमिस्ट

सीमेन्ट कोई भी हो लेकिन वाटरप्रूफिंग केमिकल मिस्टर केमिस्ट ही हो, क्योंकि मिस्टर केमिस्ट वाटरप्रूफिंग केमिकल ईम्पोर्टेड केमिकल से बनाया गया है, प्रत्येक पैक पर नम्बर युक्त होलोग्राम से नकल से पूरी तरह सुरक्षित १, ५, १०, २० एवं २०० लीटर होलोग्रामिक पैक में अब आपके यहां भी उपलब्ध । मिस्टर केमिस्ट वाटरप्रूफिंग सीमेन्ट की ताकत बढ़ाए, घर को मजबुत बनाए ।

Mob : 9431234022 / 9435040133 Mail ID : mcwaterproof@yahoo.com

बिहार एनडीए में

कोई यहां कोई वहां

सरोज सिंह

बिहार विधानसभा चुनावों के बाद से ही राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए), कुछ अपवादों को छोड़कर, सूबे में कभी सुगठित नहीं दिखा. अब तो इस पर जमा गर्द-ओ-गुबार भी दिखने लगा है. विधानमंडल के सदनों में व्यावहारिक तौर पर एनडीए तो है ही नहीं, विधानसभा में लोक जनशक्ति पार्टी (लोजपा) का कोई सदस्य नहीं है, जबकि राष्ट्रीय लोक समता पार्टी (रालोसपा) के दो और हिन्दुस्तानी अवाम मोर्चा (हम) के एक सदस्य हैं. सदन में एनडीए के नाम पर बाकी सभी प्रतिपक्षी विधायक भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के ही हैं. विधान परिषद में भी हम के दो सदस्यों को छोड़ कर बाकी एनडीए के अन्य सभी भाजपा के ही हैं. सदन के बाहर की हालत भी इससे बेहतर नहीं है. पिछले एक साल में बिहार की राजनीति में एनडीए की वक़त कभी-कभी मात्र इसलिए दिखती रही है कि यह गठबंधन केंद्र में सत्ता में है. हालांकि भाजपा का एक सुगठित संगठन है और यह अनुशासित कार्यकर्ता की बदौलत अपनी राजनीति को आगे बढ़ाती है, पर एनडीए के अन्य सारे घटक दल सुप्रीमो संस्कृति के पोषक ही हैं. पर जहां अहं का टकराव होता है, वहां से पार्टी की गुटीय गतिविधि खबरों में होती है. ऐसे ही टकराव को बिहार ने रालोसपा में देखा और यह दो गुटों में बंट गई-कुशवाहा और अरुण गुट. हालांकि दोनों गुट एनडीए में ही हैं. लोजपा में किसी नेता की वैसी हैसियत ही नहीं है, जिससे किसी के अहं को पोषक तत्व मिले. हम में इतनी ताकत ही नहीं बची कि पार्टी के भीतर किसी उथल-पुथल को ऊर्जा मिल सके. सो, एनडीए के नाम पर बिहार की राजनीतिक सरज़मीन पर जो कुछ दिखता है, उसका नब्बे प्रतिशत से अधिक हिस्सा भाजपा ही है. विधानसभा चुनावों में पराजय के बावजूद पिछले वर्ष के शुरुआती महीनों में सूबे में एनडीए की वक़त दिखती रही. यहां एनडीए का गत साल का सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक अभियान आक्रोश मार्च रहा था. इस आक्रोश मार्च के कुछ पहले तक सूबे में बृजनाथी सिंह (लोजपा) और विश्वेश्वर ओझा (भाजपा) सहित कई राजनेताओं की हत्या हुई, निर्माण कंपनियों के लोगों की हत्या हुई, पटना सहित सूबे के कई नगरों में व्यवसायियों की हत्या हुई, सूबे में अपहरण की बड़ी-बड़ी वारदातें हुईं... और भी बहुत कुछ हुआ. इन सब के विरोध में एनडीए ने कई जिलों में धरना-प्रदर्शन किए, जिसकी परिणति पटना में आक्रोश मार्च से हुई. इससे लोगों को सार्थक और आक्रामक प्रतिपक्षी राजनीति की उम्मीद जगी, लेकिन यह पूरी नहीं हुई. एनडीए की सक्रियता आक्रोश मार्च तक ही सीमित रह गई. किसी राजनीतिक अभियान के अभाव में दलों के भीतर चाटुकारिता और नकारात्मक गतिविधि बढ़ जाती है. बिहार एनडीए में क्या हुआ, यह कहना तो कठिन है, पर दलों के अंदरखाने और गठबंधन दलों के बीच राजनीतिक मतभिन्नता बढ़ने लगी. हालांकि यह सही है कि रालोसपा को छोड़ कर कहीं और ऐसी गतिविधि कभी कोई आकार नहीं ले सकी, रालोसपा दो गुटों में बंट गई. रोचक बात यह है कि दोनों गुट एनडीए में ही हैं. गठबंधन के दलों को एकजुट रखना गठबंधन के नेतृत्वकारी दल की अघोषित-अलिखित नैतिक जिम्मेवारी होती है, लेकिन ऐसा हुआ नहीं. भाजपा ने इससे अपने को वैसे ही दूर रखा, जैसे कोई विरोधी दल खुद को रखता है.

यह बे-खबरी गठबंधन में किसी समन्वित राजनीतिक अभियान के नहीं होने से बनती है. बिहार में एनडीए फिलहाल इसी दौर में है. गत वर्ष के आरंभिक महीनों में हुए आक्रोश मार्च के बाद सूबे में एनडीए ने कोई बड़ा राजनीतिक अभियान नहीं चलाया, चाहे यह महागठबंधन सरकार के विरोध में हो या केंद्र की मोदी सरकार के समर्थन में. सूबे में टॉपर्स घोटाले के बाद एनडीए के घटक दल किसी समन्वित आंदोलन की रूपरेखा तैयार नहीं कर सके. बाद त्रासदी पर दौरों और बयानों का दौर चला, पर पार्टियों की ओर से. ऐसे अभियान में एनडीए कहीं नहीं था, ऐसे बहुत सारे मामले हैं. इनमें शराबबंदी के काले कानून का विरोध और नोटबंदी के समर्थन का अभियान भी शामिल है. दलों में समन्वय और विचार प्रक्रिया के लिए शीर्ष फोरम के अभाव में ऐसा ही होता है. बिहार में 2013 में तत्कालीन एनडीए के विघटित होने के पहले तक एक समन्वय समिति थी. हम के सुप्रीमो जीतनराम मांझी व अन्य नेताओं ने इस मसले को उठाया, पर भाजपा ने कोई ध्यान नहीं दिया. इस स्थिति में जो होना चाहिए, वह हो रहा है, जो बिहार को दिख भी रहा है.

बिहार एनडीए में फिलहाल गठबंधन के नेता भाजपा का नीतीश कुमार के प्रति नरम रुख और उत्तर प्रदेश चुनाव में घटक दलों को हिस्से की मांग बड़ा मसला बन कर उभरा है. पहले उत्तर प्रदेश की बात. भाजपा को छोड़कर बिहार एनडीए के सभी घटक दलों-लोजपा, रालोसपा और हम-ने उत्तर प्रदेश में चुनाव लड़ने की घोषणा कर दी है. लोजपा के अनुसार वह अपने उम्मीदवार देगी, पर एनडीए की छतरी में ही. रालोसपा के नेता उपेन्द्र कुशवाहा ने कहा है कि उनका दल वहां चुनाव लड़ेगा. एनडीए यदि मौका नहीं देगा तो अकेले लड़ेगा. यूपी विधानसभा की कोई सत्तर सीटों पर इसकी नज़र है. कुशवाहा बहुल इन सीटों पर रालोसपा (कुशवाहा गुट) अपना भविष्य देखती है. हम के सुप्रीमो जीतनराम मांझी भी वहां चुनाव लड़ने का दावा कर चुके हैं. उन्होंने साफ कर दिया है कि उनकी पार्टी एनडीए की छतरी के नीचे ही चुनाव में उतरना पसंद करेगी. लेकिन हम नेताओं पर भरोसा करें तो इस दल की उत्तर प्रदेश के कुछ दलों से बातचीत चल रही है. हालांकि भाजपा इस दावे को दबाव की रणनीति ही मान रही है. वस्तुतः इन तीनों दलों की ये बातें उनकी भावी राजनीति का रणनीतिक खुलासा है. लोजपा सुप्रीमो रामविलास पासवान बिहार और इस लिहाज से राष्ट्रीय राजनीति में अपनी पारी का अवसान निकट पा रहे हैं. ऐसे में उनकी पूरी राजनीति पुत्र चिराग को स्थापित करने की है. लिहाजा बिना किसी 'अगर-मगर' के भाजपा की राजनीति के साथ हैं. भाजपा की नज़र में, उपेन्द्र कुशवाहा की अब बहुत उपयोगिता नहीं रही है. भाजपा का मानना है कि उन्हें साथ रखने का विधानसभा चुनावों में कोई लाभ नहीं मिला और शायद आगे भी नहीं मिलेगा. भाजपा रालोसपा के अरुण गुट को ज्यादा उपयोगी मानता है, पर उत्तर प्रदेश चुनाव तक किसी नकारात्मक संकेत से बचने की रणनीति के तहत भाजपा नेतृत्व खामोश है. बिहार में भाजपा जीतनराम मांझी को साथ रखने की पक्षधर है. भाजपा का प्रांतीय नेतृत्व मानता है कि महादलित के बड़े तबके में मांझी की अहमियत है और इसका राजनीतिक लाभ लिया जा सकता है. पर, उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनावों में एनडीए के अपने इन बिहारी सहयोगियों और इनके दावों को लेकर भाजपा का केन्द्रीय नेतृत्व क्या करता है, यह कहना कठिन है.

बिहार एनडीए में इन दिनों सबसे अधिक परेशानी नीतीश कुमार को लेकर भाजपा के राष्ट्रीय नेतृत्व के बदलते नजरिए और उससे बनते नए रिश्तों को लेकर है. बिहार में मुख्य विपक्षी होने के बावजूद भाजपा नीतीश कुमार के बदले राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद को ही निशाने पर लेती रही. नीतीश कुमार पर हमले के लिए वह शराबबंदी कानून की 'काली धाराओं' का उपयोग करती रही. बिहार का यह मुख्य प्रतिपक्षी दल सूबे में बढ़ते भ्रष्टाचार, आर्थिक अव्यवस्था व कुशासन को भी निशाने पर लेता रहा है, पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी सहित अन्य केन्द्रीय नेताओं के नीतीश प्रेम ने इस पर ब्रेक लगा दिया है. इसका नतीजा यह हुआ कि उसी शराबबंदी कानून के समर्थन में मानव श्रृंखला में भाजपा के नेता शामिल हुए, जिसके काले कानूनों के खिलाफ वे राज्यपाल तक गए थे. इतना ही नहीं, मकर संक्रांति के दिन नाव हादसे को लेकर नीतीश कुमार की सरकार पर सीधा हमला करने व उनसे इस्तीफा मांगने के लिए बिहार के पार्टी नेताओं को घंटों मशक्कत करनी पड़ी. कहते हैं, राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह से अनुमति मिलने के बाद ही नाव हादसे के लिए मुख्यमंत्री को कटघरे में खड़े करने का बयान दिया गया और उनसे इस्तीफा मांगा गया. शुरू में कई घंटों तक भाजपा का प्रदेश नेतृत्व नख-दंतहीन बना रहा. मानव श्रृंखला को लेकर एनडीए के तीन दल- भाजपा, रालोसपा और लोजपा- एक तरफ थे और मांझी का हम दूसरी तरफ. मांझी का कहना था कि हमने शराबबंदी कानून के काले प्रावधानों का विरोध किया था. उन प्रावधानों के रहते हम शराबबंदी के पक्ष में कैसे खड़े हो सकते हैं? इसका उपयुक्त जवाब देने में एनडीए के अन्य दल विफल हैं.

बिहार में भाजपा और मुख्यमंत्री नीतीश कुमार में पुराने रिश्तों के नवीनीकरण की प्रक्रिया अभी ठीक से शुरू भी नहीं हुई है. इसी तरह, एनडीए में अंतर्विरोधों के घाव अभी ठीक से पके भी नहीं हैं. इसे तो अभी पकना और फूटना है. भाजपा फिलहाल नीतीश कुमार को नजदीक लाने की हरसूरत कोशिश कर रही है. भाजपा और जद (यू) की ये नजदीकियां एनडीए में अंतर्विरोध और उसकी अभिव्यक्ति की गुंजाइश बढ़ाएगी ही, सत्तारूढ़ महागठबंधन में नई गतिविधियों को भी जन्म देगी. यह माहौल सूबे में नए राजनीतिक समीकरण की जमीन तैयार करेगा. इस बारे में सोचने के लिए अभी प्रतीक्षा करनी होगी, कम से कम राष्ट्रपति चुनाव तक. ■

feedback@chauthiduniya.com

> बिहार एनडीए में इन दिनों सबसे अधिक परेशानी नीतीश कुमार को लेकर भाजपा के राष्ट्रीय नेतृत्व के बदलते नजरिए और उससे बनते नए रिश्तों को लेकर है. बिहार में मुख्य विपक्षी होने के बावजूद भाजपा नीतीश कुमार के बदले राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद को ही निशाने पर लेती रही. नीतीश कुमार पर हमले के लिए वह शराबबंदी कानून की 'काली धाराओं' का उपयोग करती रही.

लुभावने नारों और गठबंधन के सहारे समाजवादी पार्टी

गांठों से भरा गठबंधन

मृत्युंजय दीक्षित

अखिलेशवादी समाजवादी पार्टी कांग्रेस के साथ गठबंधन कर सत्ता में वापसी की कवायद कर रही है. यह गठबंधन गांठों से भरा है. पिछले पांच वर्षों की आपसी तिक्तता और परस्पर-विरोधी बयानबाजियों की तल्खी से आम लोग दो-चार होते ही रहे हैं. आपसी दंगल के दंश से बेहोश हो रही समाजवादी पार्टी महागठबंधन के इंजेक्शन से थोड़ी होश में आई है और इसी के बूते अखिलेशवादी समाजवादी चुनावी मैदान में उतरने को तैयार हैं. लंबे अर्से से सपा में चल रहे झगड़े को जनता ने अच्छी तरह से देखा-समझा है. नए युग की सपा के लिए चुनाव मैदान में उतरने का बहुत ही कम समय बचा था. यही कारण है कि सपा में गठबंधन का फैसला और उम्मीदवारों के चयन के साथ-साथ चुनावी घोषणा पत्र जारी करने की औपचारिकताएं आनन-फानन में पूरी करनी पड़ीं. अब सपा में चाचा शिवपाल यादव व अंकल अमर सिंह का वर्चस्व पूरी तरह से समाप्त हो चुका है. एक तरह से 2017 में सपा का नया युग प्रारंभ हो चुका है.

समाजवादी पार्टी ने 2017 के चुनावों के लिए जो घोषणा पत्र जारी किया है, वह लोक-लुभावन है, पर साथ ही कई सवाल भी खड़े कर रहा है. इन वादों को वह किस प्रकार पूरा करेगी? सपा सरकार ने विगत चुनावों से पहले जो वादे किये थे, उनमें से अधिकतर आधे-अधूरे हैं, कुछ में तो हाथ भी नहीं डाला गया. यह बात अलग है कि चुनावों का ऐलान होने से पहले ही मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने उद्घाटन व शिलान्यास कार्यक्रमों की होड़ लगा दी. सपा के चुनावी हथकंडे में सबसे बड़ा दांव कांग्रेस के साथ गठबंधन का है. सपा के नये मुखिया अखिलेश यादव का मानना है कि कांग्रेस के साथ गठबंधन हो जाने पर गठबंधन की तीन सौ सीटें आ जाएंगी. यही कारण है कि काफी उठापटक के बाद सपा व कांग्रेस आलाकमान के बीच सीटों पर सहमति बन पाई है. माना जा रहा है कि जो गठबंधन एक बार बिखरने की कगार पर आ गया था, उसे फिर से संवारने का काम प्रियंका ने किया है. गठबंधन के बाद सपा 298 व कांग्रेस 105 सीटों पर सहमत हो गई है. कांग्रेस को यह गठबंधन मजबूरी में ही करना पड़ा है. सपा की तुलना में वर्तमान में कांग्रेस का संगठन बेहद नाजुक दौर में है. वहीं उसके पास अब परंपरागत वोट-बैंक भी नहीं रह गया है. कांग्रेस ने इन चुनावों में गठबंधन के पहले 27 साल यूपी बेहाल का नारा दिया था जिसकी अब हवा निकल चुकी है. कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी ने अपनी किसान यात्राओं, खाट सभाओं के माध्यम से कांग्रेस के पक्ष में माहौल बनाने का प्रयास किया था. प्रदेश के कई जिलों में राहुल गांधी ने रोड शो का भी आयोजन किया व ब्राह्मण मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए शीला दीक्षित को मुख्यमंत्री पद का दावेदार घोषित किया. लेकिन भाजपा को रोकने की चाहत व मुस्लिम मतों के बिखराव को रोकने के लिए कांग्रेस को सपा के आगे झुकने के लिए तैयार होना पड़ रहा है. एक प्रकार से वह बैकडोर के माध्यम से सत्ता में फिर से वापसी की बाट जोह रही है. कांग्रेस समझ चुकी थी कि वह लाख कोशिशें के बाद भी अकेले दम पर दो दर्जन से अधिक सीटों पर विजय नहीं प्राप्त कर सकती. कांग्रेस का प्रदेश में पीके प्रयोग फ्लॉप हो चुका है. राहुल गांधी अब साइकिल के पीछे बैठकर अपनी राजनीति को पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रहे हैं. जबकि कहा जा रहा है कि यह गठबंधन सांप्रदायिक ताकतों को रोकने तथा धर्मनिरपेक्ष ताकतों को मजबूत करने के इरादे से किया जा रहा है.

सपा के घोषणपत्र पर और कांग्रेस के साथ गठबंधन हो जाने के बाद विपक्षी योद्धाओं विशेषकर बसपा नेता मायावती व भाजपा ने जमकर हमला बोला है. मायावती ने जोरदार हमला बोलते हुए कहा कि सपा का काम कम, अपराध अधिक बोलता है. उन्होंने सपा के घोषणापत्र को औपचारिकता निभाने वाला बताते हुए कहा कि सपा के दागी चेहरों ने अपनी गलत नीतियों और कार्यकलापों से पांच साल तक अराजक, आपराधिक, भ्रष्टाचार और सांप्रादायिक दंगों का जंगलराज देकर पिछले घोषणापत्र को मजाक बनाकर रख दिया है. मायावती का कहना है कि सपा को घोषणापत्र जारी करने के पहले अपने गिरेबान में झांकना चाहिए था. प्रदेश भाजपा अध्यक्ष केशव प्रसाद मौर्य का कहना है कि पूरे प्रदेश में अराजकता का वातावरण है तथा प्रदेशभर में कहीं भी महिलाओं का सम्मान सुरक्षित नहीं है. इन परिस्थितियों में सपा का घोषणापत्र झूठ का पुलिंदा मात्र है. वैसे भी यदि सभी वादों पर गौर किया जाए तो सपा ने जो भी वादे किये हैं, उनमें से अधिकतर तभी पूरे हो सकेंगे, जब वे केंद्र के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकेंगे. वैसे भी अभी तक कितने घोषणापत्र सभी दलों ने पूरे किए? अब समय आ गया है कि सभी दलों व चुनाव आयोग को मिलकर घोषणापत्रों के प्रति भी एक आवश्यक गाइडलाइन बनाने पर विचार करना चाहिए. चुनाव आयोग इन सभी पत्रों का हलफनामा भी दाखिल करवाए तथा हर चुनाव से पहले इनकी व्यापक समीक्षा का प्रावधान होना चाहिए. यदि जो दल इन वादों को वास्तविक धरातल पर पूरा न कर सके, तो उन दलों का चुनाव रद्द करने का कानून अनिवार्य कर देना चाहिए या फिर घोषणा पत्र जारी करने की परंपरा ही समाप्त कर देनी चाहिए. ये वादे अधिकांशतः जनता को बेवकूफ बनाने के लिए ही होते हैं. सपा सरकार ने अपने कई वादे पिछले चुनावों में भी किए थे, लेकिन वह आजतक पूरे नहीं हो सके. सपा ने सबसे बड़ा वादा किया था कि स्मारक घोटालों और भ्रष्टाचार के मामलों में जो कोई दोषी होगा वह जेल जाएगा, लेकिन आज भी स्मारक घोटाले वाले बाहर घूम रहे हैं तथा अगली सरकार बनाने की ओर अग्रसर हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

अपने बूते जीतने का दम क्यों नहीं!

डॉ. दिलीप अग्निहोत्री

समाजवादी पार्टी के नेता ही कहते हैं कि यदि सपा में मुलायम युग होता तो कांग्रेस के साथ सपा का गठबंधन नहीं होता. जब भारत में सर्वाधिक विकास का दावा किया जा रहा है, तब तीन सौ सीटें अपने बूते पर जीतने का विश्वास होना चाहिए. गठबंधन के पहले भी अखिलेश बार-बार यह कहते रहे हैं कि कांग्रेस से गठबंधन हो जाए तो हम तीन सौ सीटों से अधिक जीतेंगे. कांग्रेस की भांति अखिलेश को भी यह बताना चाहिए कि सांप्रदायिक शक्तियों को रोकने और तीन सौ का आंकड़ा पार करने का विचार उनके मन में कब आया. गठबंधन होने के पहले तो उनकी पार्टी भी पल-पल बदल रही थी. जब उद्देश्य इतना बड़ा था, तब इतनी अनिश्चितता क्यों थी? कुछ समय पहले तक अखिलेश कांग्रेस को लड़ाई से बाहर मान रहे थे.

चुनाव से पहले दल-बदल की बयार चलती है, इसमें कोई नई बात नहीं है. एक सीमा तक कोई भी पार्टी इसकी उपेक्षा नहीं कर सकती है. खासतौर पर कद्दावर और जनाधार वाले नेता दल-बदल करते हैं, तो उन्हें समायोजित करने की विवशता भी होती है. ध्यान यह होना चाहिए कि दल-बदल करने वाले नेता नई पार्टी के विचार और रीति-नीति को आत्मसात करते हैं कि नहीं. व्यावहारिक तथ्य यह है कि विभिन्न पार्टियां सत्ता में पहुंचना चाहती हैं. इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्हें दल-बदलने वालों को स्वीकार करना पड़ता है. लेकिन सरकार संबंधित पार्टी की विचारधारा के अनुरूप ही चलनी चाहिए. इसमें बहुमत दल के मुखिया की भूमिका बदलने के बाद सत्ता पक्ष के विधायक बने नेता भी उसी अनुरूप आचरण करते हैं. यही कारण है कि संबंधित पार्टी के कार्यकर्ता भी प्रायः दल-बदल करके प्रत्याशी बने नेता को स्वीकार कर लेते हैं. लक्ष्य बड़ा हो तो कतिपय व्यावहारिक कठिनाई आती है. किन्तु किसी नेता के लिए पार्टी को अपनी विचारधारा से समझौता नहीं करना चाहिए. जनादेश के अनुरूप न्यूनतम साझा कार्यक्रम के आधार पर गठबंधन को भी अनुचित नहीं माना जाता. प्रजातांत्रिक व्यवस्था के संचालन में ऐसे अवसर भी आते हैं.

स्पष्ट है कि दल-बदल के अनुभव कोई नए नहीं है. लेकिन उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव से पहले राष्ट्रीय पार्टी कांग्रेस एक नए चलन के लिए चर्चित हुई. कई दिन तक इस पार्टी के पल-पल बदलने का स्वरूप दिखाई देता रहा. कभी सपा के साथ गठबंधन की खबर चलती थी, कभी कांग्रेस नेताओं, प्रवक्ताओं के सुर बदल जाते थे. 27 साल यूपी बेहाल के दावों पर उन्हें यकीन हो जाता था. फिर चिर-परिचित दलील दी जाती है कि सांप्रदायिक-शक्तियों को रोकने के लिए सपा से गठबंधन कर रहे हैं. एक बार तो गठबंधन की संभावना पूरी तरह से समाप्त ही लग रही थी. सपा ने उन सीटों पर भी प्रत्याशी उतार दिए, जहां से कांग्रेस जीती थी. इसमें कांग्रेस विधायक दल के नेता प्रदीप माथुर भी शामिल थे. इतना सुनना था कि कांग्रेस के प्रवक्ताओं के सुर फिर बदल गए. फिर उन्हें सपा शासन में कानून व्यवस्था खराब लगने लगी. विकास के दावों पर इनका विश्वास समाप्त हो गया. फिर 27 साल यूपी बेहाल नजर आने लगा. सांप्रदायिक शक्तियों को रोकने का मंसूबा समाप्त हो गया. यह वैचारिक बदलाव भी अंतिम नहीं था. पल-पल बदलने का एपिसोड तैयार हो रहा था.

27 साल यूपी बेहाल पर कांग्रेसी नेताओं को जवाब देते नहीं बन रहा है. स्वाभाविक तौर पर जब किसी के पास अपने बचाव में कोई दलील नहीं होती तो वह दूसरे पर हमला करता है. यही कार्य कांग्रेस की तरफ से हो रहा है. कहा जा रहा है कि भाजपा भी अपनी विरोधी महबूबा मुफ्ती के साथ सरकार चला रही है. लेकिन सवाल चुनाव बाद सरकार चलाने का नहीं है. जम्मू कश्मीर विधानसभा चुनाव से पहले भाजपा और महबूबा मुफ्ती ने पूरे दम-खम से चुनाव लड़ा. मतलब चुनाव से पहले इन दोनों पार्टियों ने हथियार नहीं डाले थे. इनका मनोबल कमजोर नहीं हुआ था. दोनों ने अपने दम पर सरकार बनाने का मंसूबा दिखाया. उसके अनुरूप पूरा जोर लगाया. दोनों सबसे बड़ी पार्टी बन कर उभरीं, लेकिन मतदाताओं ने किसी को अकेले सरकार बनाने का जनादेश नहीं दिया. उस विधानसभा में मात्र दो ही विकल्प थे. एक यह कि गठबंधन सरकार बने, दूसरा यह कि विधानसभा भंग करके दुबारा चुनाव हो. दूसरे विकल्प में संशय था. यदि दुबारा चुनाव में भी हंग असेंबली बनी, तो क्या होगा. नेशनल कॉन्फ्रेंस व कांग्रेस मिलकर सरकार बनाने की स्थिति में नहीं थी. पीडीपी उन्हें समर्थन देने को तैयार नहीं थी. ऐसे में भाजपा-पीडीपी के न्यूनतम साझा कार्यक्रम के तहत सरकार बनाने के अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं था.

जनादेश का इससे अच्छा क्रियान्वयन तात्कालिक स्थिति में संभव नहीं था. जाहिर है जम्मू कश्मीर में भाजपा-पीडीपी गठबंधन की तुलना उत्तर प्रदेश में सपा-बसपा गठबंधन से संभव ही नहीं है. यहां तो दोनों पार्टियों ने अपनी कमजोरी का प्रदर्शन किया है. ■

feedback@chauthiduniya.com

वायदों और विवादों से भरा अखिलेशवादी-समाजवादी घोषणा पत्र

चेहरे के साथ प्राथमिकताएं भी बदल गईं

अखिलेश के कार्यकाल में अल्पसंख्यकों को 'धार्मिक स्वतंत्रता' नहीं थी? घोषणा पत्र से उठा सवाल

प्रभात रंजन दीन

उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव के पहले जो सियासी चर्चाएं सरगर्म हैं, उनमें बड़ा मुद्दा समाजवादी पार्टी का घोषणापत्र भी है. घोषणापत्र के जरिए मतदाताओं को रिश्वत देने की जो रवायत दक्षिणी राज्यों में रही है, अखिलेश यादव ने उसी परम्परा को उत्तर में लागू करने का जतन किया है. वर्ष 2012 के विधानसभा चुनाव में समाजवादी पार्टी का घोषणा पत्र मुलायम सिंह यादव के दिशा-निर्देशन में तैयार हुआ था. 2017 में अखिलेश यादव ने अपने दिशा-निर्देशन में घोषणा पत्र तैयार कराया. स्वाभाविक तौर पर प्राथमिकताएं बदलीं, पर अस्वाभाविक तौर पर चेहरे बदले. इस बार घोषणा पत्र जारी करने के लिए मुलायम नहीं आए. शिवपाल भी नहीं थे. अखिलेश ने ही घोषणा पत्र जारी किया. महज पांच साल पहले मुलायम के घोषणा पत्र में भूमि अधिग्रहण, भ्रष्टाचार, साम्प्रदायिकता, भूख और जीवन रक्षा जैसे अहम मसले शामिल थे, लेकिन अखिलेश के घोषणा पत्र से ये मसले गायब हैं. समाज के आखिरी छोर पर खड़े व्यक्ति की प्राण रक्षा और भूख से मुक्ति के उपाय पिछले घोषणा पत्र में शुमार थे, इस बार नहीं हैं. भ्रष्टाचार का मसला मुलायम के घोषणा पत्र में अहमियत के साथ शामिल किया गया था, लेकिन अखिलेश ने इसे कोई अहमियत नहीं दी. जबकि सत्ता में आने के पहले अखिलेश यादव यह बार-बार कहते थे कि बसपा के कार्यकाल में स्मारकों, पत्थरों और पार्कों के निर्माण पर अरबों रुपये के जो घोटाले हुए उसकी पुख्ता जांच होगी और दोषी जेल में होंगे, लेकिन ऐसा नहीं हुआ. लाजिमी है कि अखिलेश के घोषणा पत्र से भ्रष्टाचार के मसले को हटना ही था. अखिलेश यादव ने एक तरफ अपने घोषणा पत्र से साम्प्रदायिकता के मुद्दे को निकाल बाहर किया और दूसरी तरफ अल्पसंख्यकों की 'धार्मिक स्वतंत्रता' सुनिश्चित किए जाने के आश्वासन की लाइन जोड़ कर नए सिरे से विवाद पैदा कर दिया. अब राजनीतिक विश्लेषकों से लेकर सामाजिक चिंतक तक इस लाइन को समझने में लगे हैं कि उत्तर प्रदेश में अल्पसंख्यकों की 'धार्मिक स्वतंत्रता' सुनिश्चित किए जाने का क्या तात्पर्य है. क्या उत्तर प्रदेश में अब तक अल्पसंख्यकों को 'धार्मिक स्वतंत्रता' नहीं थी? इसके लिए कौन दोषी है? और यदि अखिलेश सरकार के पांच साल के कार्यकाल में अल्पसंख्यकों को 'धार्मिक स्वतंत्रता' थी तो फिर इसे नए सिरे से घोषणा पत्र में लिखने की क्या जरूरत थी? अखिलेश यादव को इन दो सवालों में से किसी एक का उत्तर तो देना ही चाहिए.

अखिलेशवादी घोषणा पत्र में समाजवादी पार्टी ने वोट के बदले में मुफ्त अनाज, घी और प्रेशर कुकर देने का लिखित वादा देकर वोट के बदले घूस को आधिकारिक मान्यता दे दी. इसके अलावा भी तमाम ऐसे वायदे हैं, जिसे घोषणा पत्र में शामिल करने के पहले पूर्ववर्ती वायदों के पूरा होने की स्थिति की समीक्षा कर ली जानी चाहिए थी. पिछले चुनावों के तमाम वायदे पूरे नहीं हुए और नए वायदों का बोझ बढ़ा लिया गया. 32 पेजी घोषणापत्र किस्म-किस्म के वायदों का आकर्षक पैकेज है, जिसमें लैपटॉप, कन्या विद्याधन, चार लेन सड़कें, अस्पताल, शिक्षा, तकनीकि योजनाएं, मेट्रो रेल सेवा विस्तार और एक्सप्रेस-वे योजना के फैलाव का वायदा शामिल है. गरीब परिवारों को मुफ्त में गेहूं, चावल, घी और महिलाओं को प्रेशर कुकर देने का ऐलान उत्तर प्रदेश के तमिलनाडु या आंध्र प्रदेश के रास्ते चलने की सनद दे रहा है. अखिलेश यादव ने महिलाओं को राज्य की सरकारी बसों में आधे किराये की छूट देने की योजना का भी वादा किया है. कक्षा नौ से 12वीं तक की छात्राओं को साइकिल, मेधावी छात्राओं को सोलर टैबल लैंप, किसानों को सस्ते दर पर कर्ज, किसान बीमा योजना की राशि बढ़ाने, किसान क्रेडिट कार्ड पर सब्सिडी, पशुओं के इलाज के लिए भी एंबुलेंस सेवा चलाने, उच्च शिक्षण संस्थानों में वाई-फाई की सुविधा देने, विशेष बस सेवा देने और स्कॉलरशिप देने का चुनावी लॉलीपॉप भी दिखाया गया है. समाजवादी पार्टी ने दोबारा सरकार बनने पर स्मार्टफोन देने का वादा पहले से कर रखा है. समाजवादी स्मार्टफोन योजना में अब तक एक करोड़ से अधिक पंजीकरण हो चुका है.

घोषणापत्र में अल्पसंख्यक कल्याण की कई योजनाएं शामिल कर अखिलेश ने मुलायम के उस तोहमत से बचने की कोशिश की है, जिसमें नेताजी ने अखिलेश को मुस्लिम विरोधी बताया था. हालांकि अखिलेश के मुख्यमंत्री बनने के बाद तीन दर्जन से अधिक विभागों की विभिन्न योजनाओं में अल्पसंख्यकों को शरीक करने की घोषणा की गई थी. लेकिन यह योजना जमीनी स्तर पर कार्यान्वित नहीं हो पाई, अधिकारी केवल मीटिंग ही करते रह गए. अखिलेश ने इस बार अल्पसंख्यकों के लिए एक लाख सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम व्यवसाय सुनिश्चित करने की बात कही है. बुजुर्गों के लिए ओल्ड एज होम सहित मुफ्त यात्रा सुविधा सहित मोहल्ला क्लीनिक व डेढ़ लाख से अधिक वार्षिक आय वालों को मुफ्त में इलाज देने की सुविधा का भी वादा किया गया है.

समाजवादी पार्टी के इस घोषणा पत्र को बसपा सुप्रीमो मायावती ने प्रचार के उद्देश्य से की जाने वाली नाटकबाजी करार दिया है. मायावती ने कहा कि जातिवादी नीतियों, कार्यक्रमों और कार्यकलापों से प्रदेश को पिछले पांच वर्षों तक लगातार अराजक, आपराधिक, साम्प्रदायिक दंगे, तनाव और भ्रष्टाचार का जंगलराज देकर समाजवादी पार्टी ने अपने पिछले घोषणापत्र का जिस प्रकार से मज़ाक बनाया है उससे इन्हें दोबारा घोषणा-पत्र जारी करके नए वायदे करने का नैतिक अधिकार ही नहीं है. सपा ने फिर भी जनता को धोखा देने के लिए ऐसा दुस्साहस किया है, यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है. सपा को घोषणा-पत्र जारी करने के पहले अपने गिरेबान में झांक कर देख लेना चाहिए था कि उसने अपने पिछले घोषणा-पत्र में प्रदेश की आम जनता से किए गए जनहित व जनकल्याण से सम्बन्धित चुनावी वायदों पर क्या अमल किया.

भारतीय जनता पार्टी ने सपा के घोषणा पत्र को थोथे वायदों का पुलिंदा बताया. भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष केशव प्रसाद मौर्य ने कहा कि पहले बेरोजगारी भत्ता, लैपटॉप और टैबलेट का सब्जबाग दिखा कर सपा सत्ता पर काबिज हुई. अब स्मार्टफोन, प्रेशर कुकर और मुफ्त अनाज-घी के जरिए सत्ता पाने की जुगत में है. मौर्य कहते हैं कि प्रदेश का बेरोजगार युवा नौकरियों की नीलामी नहीं भूला है. राज्यलोक सेवा आयोग के भ्रष्ट अध्यक्ष अनिल यादव के बचाव में सरकार सुप्रीमकोर्ट तक गई. भ्रष्टाचारी यादव सिंह को बचाने के लिए क्या-क्या नहीं किया. अकूत भ्रष्टाचार के आरोपी मंत्री गायत्री प्रजापति के लिए तमाम नाटकबाजी की और फिर उसे टिकट भी दे दिया. मौर्य कहते हैं कि आम नागरिकों को झांसापट्टी की कोशिशें दिखती हैं, अब उन्हें धोखा नहीं दिया जा सकता. पांच साल पहले के घोषणा पत्र में हर किसान को बीज, खाद और सिंचाई के साथ फसल की खरीद की गारंटी देने वाली सपा सरकार गन्ना किसानों का बकाया भुगतान नहीं करा सकी. अरबों रुपये के पत्थर घोटाले का कुछ नहीं हुआ. अखिलेश राज में केवल माफियाओं, बलात्कारियों, भू-माफियाओं, कब्जाधारियों, नौकरी-उद्योग और ट्रांसफर उद्योग का ही विकास हुआ.

विपक्षी नेताओं के बयानों पर तीखी प्रतिक्रिया जाहिर करते हुए समाजवादी पार्टी के मुख्य प्रवक्ता राजेंद्र चौधरी कहते हैं कि विपक्ष के पास अपनी कोई वैकल्पिक विकास योजना तो है नहीं, वे बस हवा-हवाई की बातें करके समाजवादी पार्टी के खिलाफ दुष्प्रचार करते रहते हैं. उत्तर प्रदेश की जनता उनको करारा जवाब देगी और मुख्यमंत्री अखिलेश यादव के वायदों पर भरोसा करके उन्हें फिर से एक और अवसर देगी. चौधरी ने कहा कि उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने बड़ी-बड़ी योजनाएं लागू कीं लेकिन कहीं भ्रष्टाचार नहीं हुआ. सभी वायदे निभाए गए. चौधरी दावा करते हैं कि अखिलेश यादव बेदाग मुख्यमंत्री हैं जिनके नेतृत्व में प्रदेश में दुबारा समाजवादी सरकार बनेगी. ■

feedback@chauthiduniya.com

दो घोषणा पत्रों का फ़र्क़

सपाई घोषणापत्र के हाईलाइट्स

किसानों के लिए योजनाएं- किसानों को सस्ती दर पर कर्ज. मंडियों का आधुनिकीकरण. सूखे की मार से अक्सर जूझने वाले बुंदेलखंड में पानी की उपलब्धता सुनिश्चित करना. सब्जियों और फलों के उत्पादन को अन्तरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुंचाने के लिए ग्रीन हाउस के निर्माण को प्रोत्साहित करना. किसानों के लिये नई व्यावहारिक फसल बीमा योजना शुरू करना. किसान क्रेडिट कार्ड के ब्याज पर अनुदान देना. पशुओं के इलाज के लिए 102, 108 सेवा की तरह विशेष एम्बुलेंस सेवा शुरू करना. दुग्धशालाओं का आधुनिकीकरण.

शिक्षा क्षेत्र के लिए वायदे-विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में सरकार द्वारा 'वाई-फाई' की सेवा उपलब्ध कराना. विश्वविद्यालयों तथा बड़े कॉलेजों तक छात्र-छात्राओं को पहुंचाने के लिए विशेष बस सेवा. हर मंडल मुख्यालय पर नवोदय विद्यालय की तर्ज पर समाजवादी अभिनव विद्यालय स्थापित करना. मध्याह्न भोजन के तहत हर बच्चे को मुफ्त एक लीटर देसी घी और एक किलोग्राम मिल्क पाउडर देना. सूचना एवं प्रौद्योगिकी के माध्यम से उच्च गुणवत्ता की शिक्षा देना.

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सुविधाएं- गरीब और कमजोर वर्गों के लिए असाध्य रोगों के इलाज के वास्ते नई स्वास्थ्य बीमा योजना. हर जिले में ब्लड बैंक की स्थापना, हर जिले में कम से कम एक सुपर स्पेशियलिटी अस्पताल का निर्माण. डेढ़ लाख रुपये से कम सालाना आमदनी वाले लोगों को मुफ्त सम्पूर्ण उपचार उपलब्ध कराना. विकास खंड स्तर पर कार्डियक एम्बुलेंस की सुविधा.

अल्पसंख्यक वर्ग के लिए घोषणाएं- अल्पसंख्यकों की सुरक्षा तथा 'धार्मिक स्वतंत्रता' सुनिश्चित की जाएगी. अल्पसंख्यक वर्ग के युवाओं के लिए आगामी पांच वर्षों में कम से कम एक लाख नये सूक्ष्म, लघु, मध्यम व्यवसायों का सृजन. अल्पसंख्यक वित्तीय विकास निगम को सुदृढ़ और अधिक प्रभावशाली बनाया जाएगा. अल्पसंख्यक समुदाय में मौजूद पुश्तैनी हुनर को विकसित करने के लिए चिन्हित कर क्षेत्रों में कौशल प्रशिक्षण केंद्रों की स्थापना. सुन्नी-शिया वक्फ बोर्ड को स्वावलम्बी बनाना. वाराणसी में हज हाउस का निर्माण कराना. अल्पसंख्यक वर्ग के स्वतंत्रता सेनानियों की याद में स्मारक बनवाना.

सड़क निर्माण की योजनाएं-राज्य सरकार द्वारा शुरू की जा चुकी सभी अवस्थापना योजनाओं को अधिकतम दो वर्ष में पूरा कराया जाना. समाजवादी पूर्वांचल एक्सप्रेस-वे का निर्माण रिकार्ड समय में पूरा कराना. बुंदेलखंड को तराई से जोड़ने और लखनऊ को नेपाल सीमा से जोड़ने के लिए दो नए ग्रीन फील्ड एक्सप्रेस-वे का निर्माण कराना. लखनऊ, कानपुर, इलाहाबाद और वाराणसी में आसपास के क्षेत्र को साइकिल हाईवे से जोड़े जाने की योजना.

बिजली की व्यवस्था-सभी गांवों-मजरों में बिजली पहुंचाना. ग्रामीण क्षेत्रों में घरेलू उपभोक्ताओं को 24 घंटे बिजली उपलब्ध कराना. विद्युत उत्पादक योजनाओं का निर्माण कार्य पूरा करना. पुरानी विद्युत लाइनों का नवीनीकरण करना. ग्रामीण क्षेत्रों में सौर ऊर्जा प्रणाली से स्ट्रीट लाइट की योजना पर अमल करना.

शहरी क्षेत्रों का विकास-चुनिंदा स्थानों पर ग्रीन फील्ड टाउनशिप की स्थापना करना. सभी बड़े शहरों में ट्रैफिक की समस्या का स्थायी समाधान करना. इलाहाबाद, वाराणसी, बरेली, मुरादाबाद और आगरा में रिवर फ्रंट परियोजनाएं शुरू करना.

ग्राम्य विकास-लोहिया आवास के तहत लाभार्थियों की संख्या को दोगुना करना. अत्याधुनिक स्मार्ट गांवों को क्लस्टर के रूप में विकसित करना. ग्रामीण क्षेत्रों में खेलकूद को प्रोत्साहन देने के लिए इंडियन ग्रामीण क्रिकेट लीग की तरह अन्य खेलों की लीग शुरू करना.

समाज कल्याण के लिए कार्यक्रम-असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के लिए एक आयोग गठित करना. समाजवादी पेंशन योजना तथा अन्य पेंशन योजनाओं के तहत एक करोड़ परिवारों को एक हजार रुपए की मासिक पेंशन देना. अन्त्योदय अन्न योजना तथा 'प्रायोरिटी हाउसहोल्ड' को मुफ्त गेहूं तथा चावल का वितरण करना. न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण करके उसका कठोरता से अनुपालन कराना. विधवा निराश्रित महिलाओं, विकलांगों, वृद्धजनों को राज्य सड़क परिवहन निगम की बसों में मुफ्त यात्रा. सामाजिक समस्याओं और असमानताओं की समाप्ति के लिए 'उत्तर प्रदेश सामाजिक न्याय आयोग' का गठन करना. वरिष्ठ नागरिकों के लिए 'ओल्ड एज होम' की व्यवस्था.

महिलाओं के उत्थान-सभी महिलाओं को रोडवेज बसों में यात्रा करने पर आधे किराए की छूट देना. कामकाजी महिलाओं के लिए शहरों में छात्रावासों का निर्माण कराना. महिला उत्पीड़न तथा दुष्कर्म के प्रकरणों के जल्द निस्तारण के लिए हर जिले में फास्ट ट्रैक अदालतों की स्थापना. महिलाओं के लिए मुफ्त ई-रिक्शा की व्यवस्था.

कानून एवं व्यवस्था-हर पुलिसकर्मी को सेवाकाल में तीन प्रोन्नतियों के अवसर. यूपी-100 योजना को प्रदेश के सभी 75 जिलों में लागू करना. पुलिस का जनता के प्रति व्यवहार सुधारने के लिए कार्ययोजना लागू करना. महिलाओं की सुरक्षा के लिये विशेष सतर्कता योजना बनाना.

व्यापार तथा उद्योग को बढ़ावा-'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' को धरातल पर उतारना. उद्यमियों को कारोबार के लिए ऑनलाइन स्वीकृतियों की व्यवस्था करना. इंस्पेक्टर राज समाप्त करना. उद्यमियों के लिए पूर्ण रूप से एकल खिड़की प्रणाली लागू करना. तहसील तथा विकास खण्ड स्तर पर 'फैमिली बाजारों' की स्थापना करना. वाराणसी में साड़ी डिजायन केंद्र खोलना.

सूचना प्रौद्योगिकी-मेधावी छात्र, छात्राओं के लिए मुफ्त लैपटॉप वितरण योजना को जारी रखना. आम जनता को सरकार की योजनाओं से जोड़ने के लिए मुफ्त समाजवादी स्मार्टफोन उपलब्ध कराना.

युवा कल्याणकारी योजनाएं एवं कौशल विकास-युवाओं को स्वरोजगार उपलब्ध कराने के लिये 'इंटरप्रन्योरशिप डेवलपमेंट' और 'स्टार्ट-अप' की व्यापक योजनाएं बनाना. खेलकूद के क्षेत्र में मेधावी छात्रों को प्रोत्साहित, प्रशिक्षित करने के लिये आवासीय पद्धति पर 'समाजवादी स्पोर्ट्स स्कूल' की स्थापना करना.

अधिवक्ता कल्याण- युवा अधिवक्ताओं को मासिक आर्थिक सहायता देना. 60 वर्ष से कम उम्र के वकीलों की मृत्यु पर उनके आश्रित परिवार के सदस्य को 10 लाख रुपए की सहायता देना. वकीलों के आवास के लिए ग्रुप हाउसिंग योजना चलाना.

अन्य वर्गों के लिए-चौकीदारों, होमगार्ड्स तथा प्रान्तीय रक्षा दल के जवानों के मानदेय में वृद्धि. क्षेत्रीय ग्राम स्तरीय कर्मचारियों की प्रोन्नति का मार्ग प्रशस्त करना. सभी रिक्त सरकारी पदों पर आवश्यकतानुसार भर्ती. देश की सुरक्षा में तैनात सैनिकों के मूल निवास पर उनके परिवार की सुविधा तथा सुरक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध करना. ■

विरासत को लेकर साहित्यिक संघर्ष

अनंत विजय

इस वक्त हिंदी में एक ऐसी पीढ़ी सक्रिय है जो अपनी पहचान के संकट को लेकर बहुत चिंतित रहती है. यह चिंता उनके लेखन से ज्यादा कृत्यों में या फिर सार्वजनिक आचार-व्यवहार में दिखाई देता है. इस पीढ़ी का सबसे बड़ा दर्द यह है कि उसको उल्लेखनीय नहीं माना जा रहा है. हिंदी साहित्य में आमतौर पर यह माना जाता है कि दस साल में लेखकों की एक नई पीढ़ी सामने आ जाती है. लेखकों की जो नई पीढ़ी सामने आती है वो अपने से पुरानी पीढ़ी के लेखन का अपनी रचनात्मकता से विस्तार करती है. नई और पुरानी पीढ़ी का द्वंद्व भी हर दौर में देखने को मिलता रहा है. नई पीढ़ी खुद को परंपरा या विरासत के डंडे से हांके जाने को लेकर विरोध भी प्रकट करती रही है, कभी उग्र होकर तो कभी शांति से विरोध करके तो कभी अपनी रचनाओं से पुरानी पीढ़ी से लंबी लकीर खींचकर. इस परिपाटी का निर्वाह कमोबेश हर युग में हुआ है, लेकिन समकालीन साहित्यिक परिदृश्य में एक अलग ही किस्म की रस्साकशी देखने को मिल रही है. युवावस्था की दहलीज को पार कर चुकी पीढ़ी खुद को परंपरा और विरासत के नाम पर हांके जाने के खिलाफ तो नजर आती है लेकिन उसको अपने से पुरानी पीढ़ी को रचनात्मकता के नाम पर नकारने की बेचैनी नहीं दिखाई देती है. जबकि अबतक तो यही होता आया है कि अपेक्षाकृत नई पीढ़ी अपने से पहले वाली पीढ़ी को रचनात्मक स्तर पर चुनौती देती रही है, चाहे वो नई कहानी का दौर रहा हो या फिर बीटनिक पीढ़ी का, किसी भी अन्य पीढ़ी को देखें तो यह साफ तौर पर नजर आती है. अगर हम भारतेन्दु युग से लेकर अबतक के परिदृश्य पर नजर डालें तो लगभग इसी तरह की प्रवृत्ति को रेखांकित किया जा सकता है. तो अब ऐसा क्यों हो रहा है कि रचनात्मक स्तर पर अपेक्षित यह पीढ़ियों का संघर्ष एक अलग ही रूप लेता जा रहा है. रचनाओं के माध्यम से होनेवाले संघर्ष की बजाय यह व्यक्तिगत संघर्ष में तब्दील हो गया है, जो साहित्यिक माहौल में एक अलग ही किस्म की कटुता के वातावरण का निर्माण कर रहा है, जो चिंता का विषय है. रचनात्मक स्तर पर चुनौती देना बेहतर तरीका होता है.

आलोचना की अपनी दिक्कतें हैं, वो सतही हो गई हैं, उसमें पूर्वग्रह ज्यादा दिखाई देता है आदि-आदि. इसके बावजूद साहित्य में इस विधा की अपनी एक अहमियत है, जिसको नकारने की ना तो आवश्यकता है और ना ही गढ़ और मठ तोड़ने की नारेबाजी की. आलोचना की गलत प्रवृत्तियों पर रचनात्मक तरीके से बात होनी चाहिए. वैसे भी हिंदी आलोचना के इतने बुरे दिन नहीं आए हैं कि उसको रचनाकारों से किसी भी तरह के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता हो. बावजूद इसके आलोचना के खिलाफ जिस तरह का माहौल बनाया जा रहा है वह साहित्य की हर विधा के लिए नुकसानदेह हो सकती है. जो पीढ़ी इन दिनों अपने से पुरानी पीढ़ी से विरासत और वसीयत की मांग कर रही है, अगर उस पीढ़ी के लेखकों की रचनाओं पर गंभीरता से विचार होता तो यह दिक्कत नहीं आती.

साहित्य की इस प्रवृत्ति पर विचार करने की आवश्यकता है. दस साल में अगर पीढ़ियों के बदल जाने या नई पीढ़ी के साहित्यिक परिदृश्य पर आगमन के सिद्धांत को मानें तो इस वक्त हिंदी साहित्य में करीब आठ पीढ़ियां सक्रिय हैं. नामवर सिंह और रामदरश मिश्र जैसे नब्बे पार लेखकों से लेकर सुजाता और श्रद्धा थवाइत तक. इसको हम हिंदी की रचनात्मकता की ताकत मान सकते हैं. तो फिर इसकी क्या वजह है कि बीच की एक पीढ़ी अपनी मौजूदगी को लेकर या साहित्यक परिदृश्य में अपनी उपस्थिति को लेकर इतनी संवेदनशील हो रही है. उसको अपने से वरिष्ठ पीढ़ी से अपने लेखन की वैधता पर मोहर क्यों चाहिए? उसके अंदर इतनी बेचैनी क्यों है? क्यों नहीं उस पीढ़ी के लेखकों/लेखिकाओं को अपने लेखन पर भरोसा है. अगर हम संजीदगी से इसपर विचार करते हैं तो यह लगता है कि यह मामला इतना सरल नहीं है और इसको इस तरह से देखने पर यह समस्या के विश्लेषण का सरलीकरण हो सकता है. बीच की पीढ़ी के लेखकों के बीच अपनी रचनाओं की मान्यता को लेकर जो बेचैनी दिखाई देती है दरअसल वो इस वजह से है कि उस पीढ़ी के पास अपना कोई आलोचक नहीं है. आज के दौर के ज्यादातर लेखक आलोचकों को नकारने में लगे रहते हैं. बहुधा मुक्तिबोध की पंक्ति तोड़ने ही होंगे सारे गढ़ और मठ को नारे की तरह इस्तेमाल करते हुए. आलोचकों को नकारने की यह प्रवृति इन दिनों ज्यादा बढ़ गई है. अब तो हालात ये हो गया है कि छुटभैये लेखक भी आलोचना पर सवाल खड़े करने लगे हैं. पौने उपन्यास लिखकर ख्याति प्राप्त करनेवाले लेखक भी आलोचना पर फब्ती कसते हैं. सवाल उठाना गलत नहीं है, उठने ही चाहिए, लेकिन मर्यादा का दायरा जब पार होता है तो कुंठा सामने आ जाती है.

आलोचना की अपनी दिक्कतें हैं, वो सतही हो गई हैं, उसमें पूर्वग्रह ज्यादा दिखाई देता है आदि-आदि. इसके बावजूद साहित्य में इस विधा की अपनी एक अहमियत है, जिसको नकारने की ना तो आवश्यकता है और ना ही गढ़ और मठ तोड़ने की नारेबाजी की. आलोचना की गलत प्रवृत्तियों पर रचनात्मक तरीके से बात होनी चाहिए. वैसे भी हिंदी आलोचना के इतने बुरे दिन नहीं आए हैं कि उसको रचनाकारों से किसी भी तरह के प्रमाण-पत्र की आवश्यकता हो. बावजूद इसके आलोचना के खिलाफ जिस तरह का माहौल बनाया जा रहा है वह साहित्य की हर विधा के लिए नुकसानदेह हो सकती है. जो पीढ़ी इन दिनों अपने से पुरानी पीढ़ी से विरासत और वसीयत की मांग कर रही है, अगर उस पीढ़ी के लेखकों की रचनाओं पर गंभीरता से विचार होता तो यह दिक्कत नहीं आती. सालों से लिख रहे लेखकों/लेखिकाओं के रचनाकर्म पर गंभीरता से विचार करनेवाला कोई आलोचक सामने नहीं आ रहा है. जो खुद के आलोचक होने का दावा करते हैं वो उतनी तैयारी के साथ इस कर्म में नहीं उतरते हैं. आलोचना के लिए जिस अध्ययन की आवश्यकता होती है या फिर जिस तरह से वैश्विक प्रवृत्तियों के बरक्श देसी रचनाओं को रखकर तुलनात्मक विश्लेषण की आवश्यकता होती है उसका सर्वथा अभाव दिखता है. जिन लोगों के सर पर युवा आलोचक की कलगी लगाई जा रही है उनके लेखन को देखकर भी निराशा होती है. या तो वो मार्क्सवाद के भोथरे औजारों से आलोचना करने में लगे हैं या फिर अलग-अलग लेखकों से समीक्षानुमा टिप्पणी लिखवाकर किताब का संपादन कर आलोचक बने बैठे हैं. मामला यहीं तक नहीं रुकता है. कई बार आलोचनात्मक लेखों को पढ़ने के बाद मन में यह सवाल उठता है कि आलोचक की राय क्या है? होता यह है कि वो लिखना शुरू करते ही उद्धरण देना शुरू कर देते हैं. नेम ड्रॉपिंग कर-कर के अपने लेख को वजनदार बनाने के चक्कर में उनका खुद का कोई मत सामने आ नहीं पाता है. इसका सबसे ज्यादा नुकसान उस लेखक का होता है, जिसकी रचनाओं पर उस लेख में विचार किया जाता है. ना तो रचना पर बात हो पाती है, ना ही रचना के क्राफ्ट आदि पर. अगर कोई आलोचक सामने आकर उक्त पीढ़ी की लेखिकाओं/लेखकों पर गंभीरता से विचार करेगा तो पीढ़ीगत संघर्ष दिखाई नहीं देगी. इसके अलावा उस पीढ़ी को यह भी करना होगा कि वो अपनी भी पीढ़ी के साथी लेखकों की रचनाओं पर लिखना शुरू करे. इसका एक फायदा यह होगा कि उनकी रचनाओं पर बात शुरू हो जाएगी. राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर और मोहन राकेश की त्रयी ने भी ये किया था, जिसका उनके लेखन को कितना फायदा हुआ, ये तो इतिहास में दर्ज है. अपने साथी लेखकों की रचनाओं को खारिज करने की बजाए वो उसपर विमर्श की शुरुआत करें, कटुता भी घटेगी और स्वीकार्यता भी बढ़ेगी. कटुता हमेशा रचनात्मकता को कुंद करती है. ■

anant.ibn@gmail.com

करंज

परिचय

करमर्द की हमेशा हरी-भरी रहने वाली झाड़ी होती है. इसके कंटक अत्यंत तीक्ष्ण तथा मजबूत होते हैं. आयुर्वेदीय संहिताओं में दो तरह के करौंदों का वर्णन प्राप्त होता है-1 करौंदा 2 करौंदी. करौंदे के फल पकने के पश्चात् काले पड़ जाते हैं, इसलिए इसको कृष्णपाक फल कहते हैं. यह प्रायः भारत के गुजरात, पंजाब, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश व अन्य प्रान्तों में प्राप्त होता है तथा इसकी खेती की जाती है.

औषधीय प्रयोग मात्रा एवं विधि

❖ **मसूड़ों के रोग-** करौंदे के फल की चटनी बनाकर खाने से मसूड़ों के रोग मिटते हैं.

❖ **शीतादरोग-** करौंदे के 1-2 फलों का नियमित सेवन करने से शीतादरोग का शमन होता है.

❖ **शुष्क कास-** 5 मिली करौंदा पत्रस्वरस में शहद मिलाकर चाटने से शुष्क कास में लाभ होता है.

❖ **अतिसार-** करौंदे के अपक्व शुष्क फल चूर्ण 1-2 ग्राम तथा मूल चूर्ण को मिलाकर सेवन करने से अतिसार उदररोग एवं उदर कृमियों का शमन होता है.

❖ **आमाशय विकृति-** 1-2 ग्राम करौंदा मूल चूर्ण का सेवन करने से आमाशय विकृति में लाभ होता है.

❖ **तृष्णा-** अपक्व फल के 1-2 ग्राम चूर्ण का सेवन करने से पित्त एवं कफ विकृति, अतिपिपासा, अजीर्ण तथा अरुचि में लाभ होता है.

❖ **अरुचि-** करौंदे के पके हुए फलों को खाने से अरुचि तथा पित्त-विकारों में लाभ होता है.

❖ **उदरशूल-** 1-2 ग्राम करौंदे के पुष्प चूर्ण का सेवन करने से उदरशूल का शमन होता है.

❖ करौंदे की जड़ को पीसकर उसका चूर्ण बनाकर 1 ग्राम चूर्ण में शहद मिलाकर सेवन करने से उदरशूल में लाभ होता है.

❖ **पामा-** करौंदा मूल को पीसकर लेप करने से पामा तथा खुजली में लाभ होता है.

❖ **त्वग्-विकार-** करौंदे के पक्व फल को पीसकर लगाने से त्वग्-विकार, पामा, कण्डू तथा दाह में लाभ होता है.

❖ **खाज/खुजली-** करौंदे के मूल को अश्व मूत्र, नींबू रस तथा कपूर के साथ पीसकर लगाने से खुजली का शमन होता है.

❖ करौंदे के मूल को पानी में पीसकर, तेल में पका लें, तेल को छानकर ठंडा करके लगाने से खुजली मिटती है.

❖ **व्रण-** करौंदे के मूल को पीसकर व्रण पर लगाने से व्रण जल्दी भर जाता है.

❖ **अविरामी-ज्वर-** करौंदे के पत्रों का क्वाथ बनाकर, 10-20 मिली मात्रा में सेवन करने से अविरामी-ज्वर, नियमित रहने वाले ज्वर में लाभ होता है.

❖ **पैरों का फटना-** करौंदे के बीजों को पीसकर पैरों पर लगाने से बिवाई, पैरों के फटने में लाभ होता है.

❖ **ज्वर-** करौंदे के पत्तों का क्वाथ बनाकर, 15-30 मिली तक पिलाने से ज्वर तथा ज्वरजन्य दाह का शमन होता है.

❖ **मानस रोग-** करौंदे के फलों का सेवन करने से मानस रोगों में लाभ होता है.

❖ **मिर्गी रोग-** 5 ग्राम करौंदों के पत्तों को पीसकर दही के साथ मिलाकर खिलाने से मिर्गी में लाभ होता है. ■

प्रयोज्यांग : पंचांग.

मात्रा : पत्र-स्वरस 10-20 मिली. बीज चूर्ण 1-3 ग्राम.

साईं वंदना

साईं भक्ति-प्रवाह के रहस्य

आत्मविश्लेषण कर निकालें समस्याओं का हल

डॉ. चन्द्रभानु सतपथी

पिछले अंक से आगे

सामान्यतः बाबा जैसे सद्गुरु अपने आदेशों का पालन करने के लिए अनिच्छुक भक्तों पर कभी दबाव नहीं डालते. भक्तों के जो हित में हो वैसा करने का सुझाव कभी वे (शब्दों द्वारा, व्यवहार एवं साक्षात् अनुभव आदि रूप में) प्रत्यक्ष रूप से और/या (स्वप्नों के माध्यम से, कथाओं, संकेतों एवं किसी अन्य माध्यम द्वारा) अप्रत्यक्ष रूप से अपने प्रत्येक भक्त या कभी-कभी भक्त-समूह को देते थे. कभी-कभी बाबा रहस्यमय बातें करते थे, कभी टूटे-फूटे वाक्यों में या कभी किसी दुरूह भाषा में कुछ बोलते रहते थे. बाबा ने किस संदर्भ में, किस विषय पर क्या कहा, जब भक्तगण इस विषय में मन ही मन बहुत लंबे समय तक चिंतन करते थे, जब जाकर वे बाबा द्वारा कही गई बातों का अर्थ क्रमशः समझ पाने में समर्थ हो पाते थे. बाबा अपने भक्तों की समस्याओं का सीधा समाधान भी कर सकते थे, लेकिन उनका तरीका ऐसा था कि वे (भक्तों को) प्रत्यक्ष अनुभव के मार्ग में लेकर उनकी प्रगति करना चाहते थे, ताकि लोग आत्म-विश्लेषण की प्रक्रिया से गुजर कर स्वयं अपनी समस्याओं के हल निकालें. बहुत बार वे कुछ भक्तों से यह पूछते रहते थे कि जब वे अन्य लोगों के साथ थे, तो क्या बात कर रहे थे. तब वे उन्हें विभिन्न उपायों से समझाते थे कि मन में बलपूर्वक आने वाले नकारात्मक या कुविचार, जिन्हें रोक पाना कठिन है, उनका सामना कैसे किया जाए और उनके स्थान पर सकारात्मक या अच्छे विचार उत्पन्न करने की आदत कैसे डाली जाए. सर्वज्ञ सद्गुरु अपने शिष्यों के बुरे एवं अच्छे विचारों पर सदैव नजर रखते थे. इस विषय में सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं. बाबा अपनी रहस्यमय सूक्ष्म शक्ति से भक्तों के मन को झकझोर कर उन्हें सोचने के लिए विवश कर देते थे और इस प्रकार भक्तों को अपनी समस्याओं का स्वयं समाधान करने का रास्ता दिखाते थे.

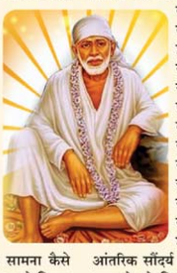

बहुत से भक्तों को वे स्वप्न में भी निर्देश दिया करते थे. वे इस उद्देश्य से भक्तों की इस प्रकार सहायता करते थे, ताकि उनके भक्तों का अंतःकरण और अधिक निर्मल एवं पवित्र हो सके, जो कि सद्गुरु की ईश्वरीय योजना के अनुसार आध्यात्मिक चेतना के विकास-मार्ग पर चलने के लिए अत्यंत आवश्यक है. सद्गुरु यह कभी भी नहीं चाहते हैं कि उनके शिष्य उनसे सहायता प्राप्त करने के लिए सदैव उन्हीं पर निर्भर रहें. वस्तुतः वे अपने शिष्यों को सद्गुणों से युक्त आत्म-निर्भरशील सतपुरुष की अवस्था तक विकसित करना चाहते हैं, ताकि वे ईश्वरीय योजना के अनुरूप इस पृथ्वी पर अथवा अन्यत्र कुछ विशेष सूक्ष्म एवं कठिन कार्य करने में सक्षम हो सकें. सद्गुरु अपने संरक्षण में भक्तों की आत्मा का मात्र उद्धार ही नहीं करते, बल्कि वे कुछ विकसित चेतना के भक्तों में से आध्यात्मिक कार्यकर्ता भी उत्पन्न करते हैं, जो उनकी सर्वव्यापक एवं सूक्ष्म गतिविधियों में सहायक हो सकें. इस संबंध में जिस आधारभूत सिद्धांत का वे पालन करते हैं, वह है- एक दीप से अनेक दीप प्रज्वलित करना और वे आशा करते हैं कि आने वाले हर समय में भी चेतना के दीप सदैव प्रज्ज्वलित होते रहें.

श्री साईं विभिन्न भक्तों के साथ जिन भिन्न-भिन्न कार्य-पद्धतियों का आश्रय लेते थे, यदि उनका गहन विश्लेषण किया जाए तो एक कार्य-प्रणाली मुख्यतया स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है और वह है- मन एवं बुद्धि का गुणात्मक विकास. अपने भक्तों के प्रशिक्षण के लिए, उन्हें स्वयं के अनुभव द्वारा सिखाने के लिए बाबा ने जो कुछ भी किया, उस विषय में यह तय था कि बाबा का ध्यान न केवल भक्तों के मानसिक गुणों का विकास करना था, बल्कि उनकी सोच/विचार-प्रक्रिया को भी विकसित करना था. उदाहरण के लिए द्वारकामाई मस्जिद में बाबा के समीप बैठे हुए नाना साहेब चांदोरकर जब एक युवती के सौंदर्य के प्रति आकर्षित हुए, तो बाबा ने उनसे यह कदापि नहीं कहा कि वे औरत को न देखें. बल्कि उन्होंने यह समझाया कि जब भी हम किसी सुंदर युवती या किसी सुंदर वस्तु को देखें, तो हमें उनके सौंदर्य को ईश्वर की रचना के एक दिव्य रूप को देखना चाहिए. आगे उन्होंने बाहरी शारीरिक सौंदर्य की अपेक्षा आत्मा के आंतरिक सौंदर्य पर बल दिया. इस उदाहरण के माध्यम से बाबा ने जो शिक्षा दी, वह यह है कि जब भी किसी वस्तु की ओर हम आकर्षित हों, तो आकर्षण की उस वस्तु से अपना ध्यान हटाने के लिए मानसिक रूप से संघर्ष करने की अपेक्षा यह बेहतर होगा कि हम अपने उस विषय से संबंधित विचार को एक उच्च विचार के साथ जोड़ दें. कोई भी मनुष्य अपने ही मन/बुद्धि से संघर्ष नहीं कर सकता, क्योंकि प्रकृति से मनुष्य में मन ही सबसे शक्तिशाली है. जैसे ही कोई बुरे विचार को मिटाने के लिए अपने मन/बुद्धि से संघर्ष करता है या मात्र अपनी इच्छा-शक्ति से बलपूर्वक अच्छा विचार लाना चाहता है, तो इससे भीतर ही भीतर कोई न कोई प्रतिक्रिया जरूर होती है, जिसके परिणामस्वरूप मानसिक उलझन और बढ़ जाती है. इस जटिल संसार में जीवन व्यतीत करते हुए किसी भी व्यक्ति के लिए मन/विचारों को नियंत्रित कर पाना सबसे अधिक कठिन है. इसीलिए बाबा अपने भक्तों के मन में उठने वाले विचारों पर सदैव नजर रखते थे और तत्काल उनका मार्गदर्शन किया करते थे. ■ *जारी...*

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

साईं भक्तों! आप भी चौथी दुनिया को साईं से जुड़ा लेख या संस्मरण भेज सकते हैं. मसलन, साईं से आप कब और कैसे जुड़े. साईं की कृपा आपको कब से मिलनी शुरू हुई. आप साईं को क्यों पूजते हैं. कैसे बनें आप साईं भक्त. साईं बाबा का जीवन और चरित्र आपको किस तरह से प्रेरित करता है? साईं बाबा के बारे में अनेक किंवदंतियां हैं, क्या आपके पास भी कुछ कहने के लिए है? अगर हां, तो केवल 500 शब्दों में अपनी बात कहने की कोशिश करें और नीचे दिए गए पते पर भेजें.

टेस्ट के बाद वन डे में चमकी टीम इंडिया

माही व युवी लौटे रंग में

माही इंग्लैंड के खिलाफ पहले वन डे में कुछ खास नहीं कर सके थे. ऐसे में दूसरे वन डे में उनपर दबाव बनता दिख रहा था. टीम इंडिया के तीन बल्लेबाजों के सस्ते में आउट होने के बाद माही पर सारा दारोमदार था. उन्होंने युवराज के साथ मिल टीम इंडिया की बल्लेबाजी को संभाल लिया. धोनी लगातार मुश्किल हालात के बड़े खिलाड़ी रहे हैं. वह दबाव में अक्सर टीम इंडिया को जीत दिलाते रहे हैं. टीम इंडिया में डेब्यू करने के तीन साल बाद ही टीम इंडिया की बागडोर संभालने वाले धोनी अपनी बल्लेबाजी के लिए हमेशा सुर्ख़ियों में रहे हैं.

सैय्यद मोहम्मद अब्बास

भारतीय क्रिकेट में विराट कोहली का सितारा इस समय काफी बुलंद है. क्रिकेट के हर फॉर्मेट में विराट का जलवा देखने को मिल रहा है. मौजूदा समय में बतौर बल्लेबाज उनका कोई सानी नहीं दिख रहा है. उनके बल्ले की ताकत को देख कई बड़े खिलाड़ी उनके मुरीद बन गये हैं. टेस्ट क्रिकेट में उनकी कप्तानी का जलवा देखने को मिल रहा है, लेकिन अब वन डे क्रिकेट में भी वह देश की कप्तानी कर रहे हैं. दरअसल माही ने वन डे क्रिकेट की कप्तानी छोड़ दी है. इसके बाद बोर्ड ने विराट को क्रिकेट के तीनों फॉर्मेट की कप्तानी सौंप दी. इंग्लैंड के खिलाफ बतौर कप्तान के तौर पर वह हिट साबित हुए. इंग्लैंड को टेस्ट क्रिकेट में धूल चटाने के बाद विराट की सेना ने वन डे में इंग्लैंड को चारों खाने चित कर दिया है. हालांकि टीम इंडिया तीन मैचों की वन डे सीरीज को 2-1 से जीतने में कामयाब रही, इस सीरीज में टीम इंडिया की बल्लेबाजी की ताकत देखने को मिली. टीम इंडिया के दो पुराने धुरंधरों ने अपने बल्ले से लोगों को एक बार अपना कायल बना दिया है. युवी और माही ने बेहद शानदार बल्लेबाजी करते हुए मेहमान टीम के होश ठिकाने लगा दिये. इतना ही नहीं इस सीरीज में केदार जादव जैसे खिलाड़ी भी अपनी बल्लेबाजी के सहारे रातों रात स्टार बन गये. केदार ने तीन मैचों की इस श्रृंखला में एक शतक और एक पचासे की बदौलत 232 रन बनाकर मैन ऑफ द सीरीज का खिताब अपने नाम किया है, टीम इंडिया ने इस सीरीज को अपने नाम कर चैम्पियंस ट्रॉफी की मजबूत दावेदारी पेश की है. चैम्पियंस ट्रॉफी से पूर्व टीम इंडिया को केवल इसी सीरीज में वन डे खेलना है. इसके बाद भारत को टेस्ट क्रिकेट में अपना जोहर दिखाना होगा. इस सीरीज ने टीम इंडिया के लिए कई विकल्प सामने लाये हैं. हालांकि टीम के कई बड़े खिलाड़ी चोटिल हैं. ऐसे में नये और पुराने खिलाड़ियों के पास टीम में अपनी जगह पक्की करने का अच्छा अवसर प्रदान किया है. टीम में रोहित शर्मा अभी फिटनेस को पाने के लिए जूझ रहे हैं, जबकि रहाणे की फॉर्म और फिटनेस को लेकर अभी कयास लगाये जा रहे हैं. दूसरी ओर गेंदबाजी में अच्छे विकल्प तैयार हुए हैं. हालांकि भारतीय गेंदबाजी को लेकर चिंता की बात है क्योंकि इस सीरीज में गेंदबाजी बेहद फ्लॉप रही है, हार्दिक पांड्या ने पांच विकेट चटकाये, जबकि जडेजा ने चार, वहीं आर अश्विन ने तीन और भुवी ने एक विकेट हासिल किया, भारत को अगर चैम्पियंस ट्रॉफी में अच्छा प्रदर्शन करना है तो गेंदबाजी में सुधार करना बेहद जरूरी है.

भारतीय टीम की इंग्लैंड के खिलाफ अपनी मजबूत बल्लेबाजी को लेकर खूब चर्चा हो रही है. माही ने कप्तानी छोड़ने के बाद तर्क दिया था कि बतौर बल्लेबाज अब वह टीम इंडिया में योगदान देना चाहते हैं. हालांकि वह अगले विश्व कप में अपनी बतौर बल्लेबाज टीम में बने रहने की कवायत में जुटे हुए हैं. यह तो समय बताएगा कि माही की फिटनेस अगले विश्व कप तक कैसी रहती है, लेकिन मौजूदा समय में वह अब निडर बल्लेबाज के रूप में सामने आये हैं. आज से कुछ साल पहले माही का यही अवतार देखने को मिलता था, लेकिन बाद में वह कप्तानी के बोझ तले दबते दिखे. धोनी ने इंग्लैंड के खिलाफ चार साल बाद वन डे क्रिकेट में शतक जमाया. उन्होंने इंग्लैंड के खिलाफ दूसरे वन डे में 134 रन की धाकड़ बल्लेबाजी की. उन्होंने इस पारी के दौरान 122 गेंदों का सामना किया और 10 चौके और छह गगन चुम्बी छक्के जड़ कर पुराने धोनी लौटने का संकेत दे डाला. उन्होंने इससे पूर्व करीब 2013 में कंगारुओं के खिलाफ सैंकड़ा जड़ा था. उनकी इस पारी ने एक बार फिर दुनिया के गेंदबाजों के लिए दहशत का फरमान जारी कर दिया है. एक समय ऐसा था जब माही के आगे जो विश्व के कई गेंदबाज आने से कतराते थे. माही ने इंग्लैंड के खिलाफ पहले वन डे में कुछ खास नहीं कर सके थे. ऐसे में दूसरे वन डे में उनपर दबाव बनता दिख रहा था. टीम इंडिया तीन बल्लेबाजों के सस्ते में आउट होने के बाद माही पर सारा दारोमदार था. उन्होंने युवराज के साथ मिल टीम इंडिया की बल्लेबाजी को संभाल लिया. धोनी लगातार मुश्किल हालात के बड़े खिलाड़ी रहे हैं. वह दबाव में अक्सर टीम इंडिया को जीत दिलाते रहे हैं. टीम इंडिया में डेब्यू करने के तीन साल बाद ही टीम इंडिया की बागडोर संभालने वाले धोनी अपनी बल्लेबाजी के लिए हमेशा सुर्ख़ियों में रहे हैं. उनके शॉट को लेकर हमेशा चर्चा होती रही है. वह मैच दर मैच भारत के सबसे भरोसेमंद क्रिकेटरों में शामिल हो गये. यह वही दौर था जब टीम इंडिया में युवा चेहरों की भरमार थी लेकिन उनमें से कई खिलाड़ियों का क्रिकेट करियर खत्म हो चुका है. माही के समय टीम इंडिया में सीनियर खिलाड़ियों का रोल भी अहम माना जाता था. धोनी ने कप्तान बनते ही टीम की पूरी तस्वीर बदल दी, लेकिन अब विराट दौर में वह अपनी विरासत सौंप कर बतौर बल्लेबाज टीम को नई राह दिखाना चाहते हैं. ऐसे में टीम इंडिया को आने वाले समय में काफी फायदा मिलने के आसार हैं. दूसरी ओर इस सीरीज में एक और पुराने खिलाड़ी ने अपनी खोयी हुई लय हासिल कर ली. युवराज सिंह ऐसा ही नाम है जो एक समय टीम इंडिया का युवराज हुआ करता था, लेकिन बाद में खराब फिटनेस उनके करियर में बाधा बनके सामने आयी. रणजी के रण में अपनी बल्लेबाजी का हुनर दिखाने के बाद टीम इंडिया में जगह मिल गयी. हालांकि उनकी वापसी को लेकर कई बातें मीडिया में चर्चा का सवाल बनी रही. पहले वन डे में लय में दिखे लेकिन उसे जारी रखने में नाकाम रहे. दूसरे वन डे में उन्होंने बेहद खौफनाक बल्लेबाजी करते हुए इंग्लैंड के तेज गेंदबाजों पर कहर बन कर टूटते नजर आये. उनकी बल्लेबाजी को देखकर लगा कि पुराना युवराज टीम इंडिया को मिल गया. उनके करियर की सबसे बड़ी पारी खेलते हुए युवी ने धमाकेदार शतक जड़ एक बार फिर सुर्खियां बटोरी है. सिक्सर किंग के नाम से मशहूर युवराज सिंह ने दूसरे वन डे में छह साल बाद 127 गेंदों में 150 रन की करिश्माई पारी खेलकर बल्लेबाजी कौशल एक बार फिर दिखाया. उनकी इस बल्लेबाजी को देखकर कई क्रिकेट के जानकारों ने माना कि युवी में अभी क्रिकेट खत्म नहीं हुआ है. युवी ने इस मैच में कई जानदार शॉट लगाए. उनमें सबसे महत्वपूर्ण पुल शॉट तो देखते ही बनते थे. इस पारी के दौरान युवी ने 21 चौके और तीन जोरदार छक्के भी जमाये. युवी का शतक उनके आलोचकों को करारा जवाब है, जो उनके करियर के खात्मे की बात करते थे. युवी ने तीसरे वन डे में अच्छी बल्लेबाजी की, युवराज सिंह ने क्रिकेट करियर में बहुत कुछ देखा है. कैंसर जैसी बीमारी को हराने के बाद मैदान पर युवराज का प्रदर्शन उम्मीद के मुताबिक नहीं रहा. टीम में वापसी के लिए वह लगातार पसीना बहा रहे थे लेकिन हर बार निराशा हाथ लगती थी. टीम में अंदर और बाहर होने की वजह से युवी का बल्ला कुंद पड़ता दिखा. इतना ही नहीं वह इससे काफी परेशान थे, लेकिन रणजी सीजन में उन्होंने अपने बल्ले को अलग तरह की धार दी. इसके बाद विराट ने उनको टीम में शामिल करने का फैसला किया. युवराज ने इस प्रदर्शन से अपने चयन को भी सही साबित कर दिया है. माही के साथ वह पहले भी कई मैच जिताऊ पारी खेल चुके हैं.

टीम इंडिया में इस समय विराट के अलावा भी कुछ बल्लेबाज हैं, जिनके बल्ले की दहाड़ बहुत तेजी से सुनायी पड़ रही है. उनमें सबसे प्रमुख है केदार जाधव. केदार लगातार अपने बल्ले के करिश्माई अंदाज की बदौलत खूब सुर्खियां बटोर रहे हैं. इंग्लैंड के खिलाफ पहले वन डे में ऐसा ही कुछ देखने को मिला. इंग्लैंड ने पुणे वन डे में पहले बल्लेबाजी करते हुए 351 रन का पहाड़नुमा लक्ष्य रखा, लेकिन केदार जाधव ने विराट के साथ मिलकर अपनी बल्लेबाजी का लोहा मनवाया. विराट और जाधव ने इस मुकाबले में 200 रन की बेजोड़ साझेदारी कर डाली और इससे इंग्लैंड के गेंदबाजों के पैरों तले जमीन खिसक गयी. विराट जहां एक ओर भारतीय बल्लेबाजी की अहम कड़ी बन चुके हैं, वहीं जाधव जैसे बल्लेबाज अब टीम इंडिया के नये स्टार के रूप में सामने आये हैं. जाधव ने इस मुकाबले में तूफानी बल्लेबाजी करते हुए केवल 76 गेंदों में 120 रन बना डाले और टीम इंडिया की जीत की मजबूत इमारत खड़ी की. जाधव ने इस पारी के दौरान 12 चौके और चार जोरदार छक्के भी लगाए थे. इंग्लैंड ने भारत के चोटी के बल्लेबाजों को ढेर कर टीम इंडिया पर दबाव बना डाला था, लेकिन विराट और जाधव ने अपनी बल्लेबाजी के सहारे इंग्लैंड के गेंदबाजों को घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया. यह भी तीसरा मौका है जब टीम इंडिया ने इतना बड़ा लक्ष्य हासिल किया है. इतना ही नहीं तीसरे वन डे में उन्होंने बेहद शानदार बल्लेबाजी करते हुए 90 रन की तेज पारी खेलकर पूरी इंग्लैंड टीम को हक्का-बक्का कर दिया था, उनकी इस पारी के चलते टीम इंडिया एक समय जीत के बेहद करीब पहुंच गई थी.

इस बीच विराट की तारीफ जितनी भी की जाए, वह कम होगी. मैच दर मैच कोहली की बल्लेबाजी का डंका बज रहा है. टेस्ट हो या वन डे विराट पर कोई फर्क नहीं पड़ता है. उन्हें टीम इंडिया का अगला सचिन भी कहा जा रहा है. जानकारों की मानें तो वह अगर इसी तरह से रन बनाते रहे तो वह सचिन के रिकॉर्ड को भी बौना साबित कर देंगे. वन डे में कप्तानी मिलने के बाद उनके खेल में गजब का आत्मविश्वास देखा जा सकता है. दबाव में उनका खेल और निखर कर सामने आता है. टीम इंडिया को जब भी जरूरत होती है, उनका बल्ला निराश नहीं करता है. लक्ष्य का पीछा करने में विराट की बल्लेबाजी चरम पर देखी जा सकती है. विराट ने पहले वन डे में 122 रन की धांसू पारी खेलकर एक बार फिर साबित किया कि वह भारतीय क्रिकेट के अब सबसे बड़े बल्लेबाज बन चुके हैं. कुल मिलाकर देखा जाये तो टीम इंडिया के लिए अच्छा संकेत है कि टीम के पास अब लम्बी बैटिंग लाइन है, जो वक्त के हिसाब से अपना खेल दिखाने में माहिर है. ■

कानपुर टी-20 में इंग्लैंड ने भारत को पटका

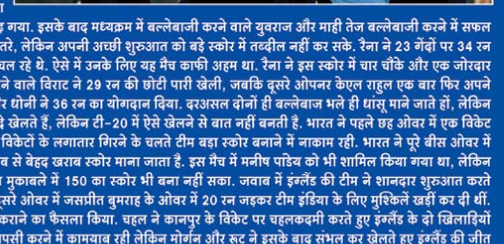

भारतीय क्रिकेट टीम ने भले ही इंग्लैंड के खिलाफ वन-डे सीरीज अपने नाम कर ली हो, लेकिन टी-20 के पहले मुकाबले में उसे पराजय झेलनी पड़ी. कानपुर में खेले गए टी-20 में टीम इंडिया चारों खाने चित हो गई. दूसरी ओर इंग्लैंड ने कोलकाता वन डे की जीत का पूरा फायदा उठाते हुए क्रिकेट के सबसे छोटे फॉर्मेट में एक बार फिर अपनी काबिलियत का लोहा मनवाया है. इंग्लैंड की टीम वन डे और टी-20 में बदल जाती है. कानपुर टी-20 में टीम इंडिया इंग्लैंड के मुकाबले बेहद कमजोर दिखी. इंग्लैंड ने इस मुकाबले में भारत को सात विकेट से हराकर सीरीज में अच्छी शुरुआत की है. इस मुकाबले में टीम इंडिया की कई खामियां उजागर हुईं. सलामी बल्लेबाजों की लगातार नाकामियों को देखते हुए विराट ने स्वयं ओपनिंग करने का फैसला किया, लेकिन यह दांव भी चल नहीं सका बल्कि विराट के आउट होने पर टीम इंडिया पर दबाव बढ़ गया. इसके बाद मध्यक्रम में बल्लेबाजी करने वाले युवराज और माही तेज बल्लेबाजी करने में सफल नहीं रहे, जबकि रैना तीन नम्बर पर बल्लेबाजी करने उतरे, लेकिन अपनी अच्छी शुरुआत को बड़े स्कोर में तब्दील नहीं कर सके. रैना ने 23 गेंदों पर 34 रन की तेज पारी खेली. रैना अरसे से टीम इंडिया से बाहर चल रहे थे. ऐसे में उनके लिए यह मैच काफी अहम था. रैना ने इस स्कोर में चार चौके और एक जोरदार छक्के लगाये. दूसरी ओर बतौर ओपनर बल्लेबाजी करने वाले विराट ने 29 रन की छोटी पारी खेली, जबकि दूसरे ओपनर केएल राहुल एक बार फिर अपने बल्ले के जौहर दिखाने में नाकाम रहे. युवराज ने 12 और धोनी ने 36 रन का योगदान दिया. दरअसल दोनों ही बल्लेबाज भले ही धांसू माने जाते हों, लेकिन शुरुआत में दोनों ही बल्लेबाज जमने के लिए काफी गेंदे खेलते हैं, लेकिन टी-20 में ऐसे खेलने से बात नहीं बनती है. भारत ने पहले छह ओवर में एक विकेट पर 47 रन बनाकर शुरुआत अच्छी की लेकिन बाद में विकेटों के लगातार गिरने के चलते टीम बड़ा स्कोर बनाने में नाकाम रही. भारत ने पूरे बीस ओवर में सात विकेट पर 147 रन बनाए जो कि टी-20 के हिसाब से बेहद खराब स्कोर माना जाता है. इस मैच में मनीष पांडेय को भी शामिल किया गया था, लेकिन उन्होंने इस मौके को गवां दिया. इस तरह से भारत इस मुकाबले में 150 का स्कोर भी बना नहीं सका. जवाब में इंग्लैंड की टीम ने शानदार शुरुआत करते हुए भारतीय गेंदबाजों की जमकर खबर ली. इंग्लैंड ने दूसरे ओवर में जसप्रीत बुमराह के ओवर में 20 रन जड़कर टीम इंडिया के लिए मुश्किलें खड़ी कर दी थीं. इसके बाद कप्तान विराट कोहली ने चहल से गेंदबाजी कराने का फैसला किया. चहल ने कानपुर के विकेट पर चहलकदमी करते हुए इंग्लैंड के दो खिलाड़ियों को चलता कर दिया और मैच में लगा कि टीम इंडिया वापसी करने में कामयाब रही लेकिन मोर्गन और रूट ने इसके बाद संभल कर खेलते हुए इंग्लैंड की जीत पक्की कर दी. इस मुकाबले में अनुभवी गेंदबाज नेहरा भी टीम में शामिल किया गया था, लेकिन उनका अनुभव भी टीम की गेंदबाजी में सुधार नहीं ला सका. देखा जाये तो पूरे वन डे सीरीज में भारतीय गेंदबाजी खराब रही है. अगर विकेटों से स्पिनरों को मदद नहीं मिलती है तो भारतीय गेंदबाजी की हालत खस्ता होते देर नहीं लगती है. टी-20 जैसे खेल में अगर एक छोटी सी चूक हो जाये तो वह मैच के लिए बहुत बड़ा खतरा साबित होती है. अगले मैचों में टीम को बल्लेबाजी क्रम भी तय करना होगा. कुल मिलाकर टीम को खासकर अपनी गेंदबाजी और बल्लेबाजी में बहुत सुधार करना होगा तभी क्रिकेट के सबसे छोटे फॉर्मेट में जीत का दम भरा जा सकता है. ■

feedback@chauthiduniya.com

बॉ सैनिक बनेंगे टाइगर श्रॉफ

लीवुड अभिनेता टाइगर श्रॉफ ने अपनी पिछली फिल्म बागी में एक विद्रोही युवक का किरदार निभाया था. अब इस फिल्म के सीक्वल बनने की तैयारी हो रही है. साथ ही टाइगर के रोल का भी खुलासा हो गया है. फिल्म के निर्माता साजिद नाडियाडवाला होंगे. मिली जानकारी के अनुसार फिल्म में टाइगर एक सैनिक के किरदार में होंगे, जिसके लिए उन्होंने तैयारी शुरू कर दी है. उन्हें फिल्म में एक्शन सीन के लिए खास ट्रेनिंग लेनी पड़ रही है और सैनिक के किरदार के लिए अपने बाल तक कटवाने पड़ सकते हैं.

यह ट्रेनिंग उन्हें टॉनी चिंग के द्वारा दी जाएगी, जिन्होंने शाओलिन सॉकर जैसी फिल्म में कोरियोग्राफी की है. फिल्म के निर्देशक डांस डायरेक्टर अहमद खान हो सकते हैं.

करण जौहर को कहीं भारी न पड़ जाए ये फैसला

प्रवीण कुमार

पिछले दिनों जब करण जौहर ने अपनी जल्द रिलीज होने वाली बॉयोग्राफी द अनसूटेबल बॉय में खुलासा किया कि अब उनकी और काजोल की 25 साल पुरानी दोस्ती ख़त्म हो चुकी है, तो हर कोई हैरान रह गया था. लेकिन अब लगता है कि बात काफी आगे बढ़ चुकी है और करण व काजोल की लड़ाई अब करण जौहर वर्सेज अजय देवगन में तब्दील हो गई है. इसका पहला दौर दिवाली पर ऐ *दिल है मुश्किल* और *शिवाय* के क्लैश के दौरान दिखा था और अब इस लड़ाई का दूसरा दौर शुरू हो चुका है.

हाल में फिल्म डिस्ट्रीब्यूटर संजय घई ने ट्वीट किया, करण जौहर ने उन सब सिंगल स्क्रीन को एक साल के लिए बैन कर दिया है, जिन्होंने शिवाय रिलीज की थी. इस बारे में बात करने पर घई ने बताया, करण ने एक बड़ी कॉरपोरेट फिल्म कंपनी के साथ मिलकर उन सभी सिंगल स्क्रीन को बैन कर दिया है, जिन्होंने शिवाय रिलीज की थी. ऐसे में, शिवाय रिलीज़ करने वाले सिनेमाघरों को फिल्म ओके जानू भी नहीं दी गई थी और आने वाले दिनों में उन्हें करण की बाकी फिल्में समेत बाहुबली 2 भी नहीं मिलेगी. करण से जब इस बारे में बात करने की कोशिश की तो उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया.

घई, करण से कहना चाहते हैं कि सिंगल स्क्रीन वालों की मज़बूरी होती है कि वे एक बार में एक ही फिल्म चला सकते हैं. वहां स्क्रीन शेयरिंग करना भी संभव नहीं है. कभी एक को ज्यादा स्क्रीन मिल जाती है, तो कभी दूसरे को, लेकिन किसी स्क्रीन को बैन करना ठीक नहीं है. बहरहाल, अब जब जंग छिड़ ही चुकी है, तो हम अजय देवगन के साथ हैं. करण जौहर का यह रवैया ठीक नहीं है. उनके खिलाफ हम कॉम्पिटीशन कमिशन में जाने की प्लानिंग कर रहे हैं. बता दें कि इससे पहले अजय देवगन भी आदित्य चोपड़ा की शाहरुख खान स्टारर जब तक है जान के खिलाफ कॉम्पिटीशन कमिशन चले गए थे, जब उनकी फिल्म सन ऑफ सरदार को कम स्क्रीन मिली थी. वहीं करण और काजोल की आपसी नाराजगी भी जगजाहिर हो चुकी है.

करण जौहर के इस रवैये से तो लगता है कि सफलता का घमंड उनके सिर चढ़कर बोल रहा है. करण और अजय के बीच बढ़ते टकराव का कारण तो समझ में आता है कि दिवाली के समय दोनों की फिल्मों को लेकर आपस में भिड़ंत हुई थी. दोनों फिल्में चलीं भी और दोनों को नुकसान भी हुआ. लेकिन काफी समय बीत जाने के बाद करण का सिंगल स्क्रीन के डिस्ट्रीब्यूटर्स को खुद की फिल्में न देने का फैसला उचित नहीं कहा जा सकता है. लगता है कि करण जौहर इस बात से भी बौखलाए हुए हैं कि उनके पास ऐ दिल है मुश्किल के ज्यादा से ज्यादा मल्टीप्लैक्स स्क्रीन के शो बुक होने के बावजूद उनकी फिल्म ने भारत में सिर्फ 112 करोड़ का ही बिजनेस किया. जबकि शिवाय के पास ज्यादा से ज्यादा सिंगल स्क्रीन के शो ही थे, जिसके जरिए फिल्म ने बॉक्स ऑफिस पर अपना दबाव बनाए रखा था और फिल्म ने 100 करोड़ से अधिक का कारोबार किया. यह एक बहुत बड़ी बात है कि कोई फिल्म लगभग सिंगल स्क्रीन पर निर्भर होकर इतना बड़ा व्यापार कर जाए. क्योंकि मल्टीप्लैक्स और सिंगल स्क्रीन की टिकटों में जमीन आसमान का फर्क होता है. शायद इसी बौखलाहट में करण जौहर का सिर घूम गया है और वह यह बात पचा नहीं पा रहे हैं. इसलिए अजय के साथ अपनी लड़ाई में करण ने सिंगल स्क्रीन के डिस्ट्रीब्यूटर्स को भी बीच में घसीट लिया है. ख़ैर हम तो यही कहेंगे कि करण जौहर का दिमाग़ फिर गया है, जो ऐसी हरकत करने पर अब उतारू हो गए हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

ये हैं ऋतिक के करियर की सबसे ख़राब फिल्में

> ऋतिक ने अपने करियर की शुरुआत पिता राकेश रोशन की ब्लॉकबस्टर फिल्म कहो न प्यार है (2000) से की थी. 17 साल के बॉलीवुड करियर में वे 22 फिल्मों में लीड रोल निभा चुके हैं. इसमें से कई फिल्में बॉक्स ऑफिस पर औंधे मुंह गिरी या फ्लॉप साबित हुई हैं.

ऋतिक रोशन स्टारर काबिल 25 जनवरी को सिनेमाघरों में रिलीज हो चुकी है. संजय गुप्ता के डायरेक्शन में बनी इस फिल्म में ऋतिक एक ब्लाइंड व्यक्ति रोहन भटनागर का किरदार निभा रहे हैं. काबिल बॉक्स ऑफिस पर लगातार अच्छा परफॉर्म कर रही है और दर्शकों को भी फिल्म बहुत पसंद आ रही है. इससे पूर्व पिछले साल 15 अगस्त के मौके पर ऋतिक रोशन की फिल्म मोहनजोदाड़ो की टक्कर अक्षय कुमार की फिल्म रुस्तम से हुई थी.

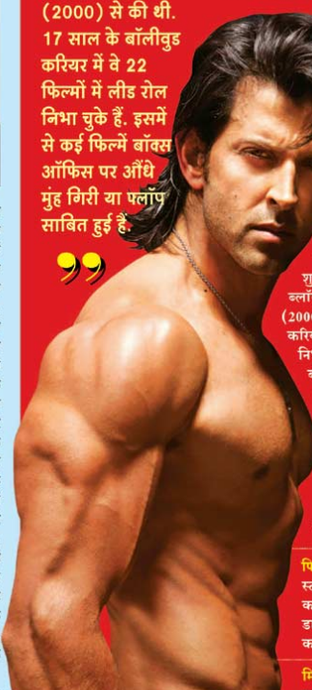

ऋतिक की यह फिल्म मोहनजोदाड़ो बॉक्स ऑफिस पर बुरी तरह से फ्लॉप साबित हुई थी. इस बार वह शाहरुख खान की रईस के साथ भिड़े हैं. अब देखते हैं कि शाहरुख और ऋतिक में कौन बाज़ी मारता है. गौरतलब है कि ऋतिक ने अपने करियर की शुरुआत पिता राकेश रोशन की ब्लॉकबस्टर फिल्म कहो न प्यार है (2000) से की थी. 17 साल के बॉलीवुड करियर में वे 22 फिल्मों में लीड रोल निभा चुके हैं. इसमें से कई फिल्में बॉक्स ऑफिस पर औंधे मुंह गिरी या फ्लॉप साबित हुई हैं. आइए जानते हैं, ऋतिक की वे फिल्में जो बॉक्स ऑफिस पर फ्लॉप साबित हुईं. ऋतिक ने फ्लॉप का स्वाद फिल्म *फिज़ा* से चखा, उनकी लास्ट रिलीज फिल्म मोहन जोदाड़ो 2016 की डिजास्टर फिल्म साबित हुई थी.

फिज़ा (2000)
स्टारकास्ट : ऋतिक रोशन, करिश्मा कपूर, नेहा, जया भादुड़ी
डायरेक्टर: खालिद मोहम्मद
कलेक्शन: 14.58 करोड़ रुपए

मिशन कश्मीर (2000)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, प्रिटी जिंटा, संजय दत्त.
डायरेक्टर: विधु विनोद चोपड़ा
कलेक्शन: 23.14 करोड़ रुपए

बादें (2001)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, करीना कपूर, जैकी श्रॉफ
डायरेक्टर: सुभाष घई
कलेक्शन: 14.45 करोड़ रुपए

मुझसे दोस्ती करोगे! (2002)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, रानी मुखर्जी, करीना कपूर, उदय चोपड़ा
डायरेक्टर: कुणाल कोहली
कलेक्शन: 12.9 करोड़ रुपए

न तुम जानो न हम (2002)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, ईशा देओल और सैफ अली खान, आलोक नाथ, रति अग्निहोत्री
डायरेक्टर: अर्जुन सबलोक
कलेक्शन: 8.05 करोड़ रुपए

आप मुझे अच्छे लगने लगे (2002)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, अमीषा पटेल
डायरेक्टर: विक्रम भट्ट
कलेक्शन: 9.45 करोड़ रुपए

मैं प्रेम की दीवानी हूं (2003)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, करीना कपूर, अभिषेक बच्चन, पंकज कपूर
डायरेक्टर: सूरज बड़जात्या
कलेक्शन: 17.3 करोड़ रुपए

गुजारिश (2010)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, ऐश्वर्या राय बच्चन
डायरेक्टर: संजय लीला भंसाली
कलेक्शन: 32 करोड़ रुपए

काइट्स (2010)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, बारबरा मोरी
डायरेक्टर: अनुराग बसु
कलेक्शन: 48.3 करोड़ रुपए

मोहनजोदाड़ो (2016)
स्टारकास्ट: ऋतिक रोशन, पूजा हेगड़े
डायरेक्टर: आशुतोष गोवारिकर
कलेक्शन:60 करोड़ रुपए

फ्लैश-बैक राजनीति में क़िस्मत आज़मा रही हैं नग़मा

बॉलीवुड से राजनीति तक का सफ़र

> फिल्मों के अलावा, नगमा सबसे ज्यादा क्रिकेटर सौरव गांगुली से अफेयर को लेकर सुर्खियों में रहीं. उन्होंने तो सौरव के प्रति अपना प्यार जाहिर भी कर दिया था, लेकिन गांगुली ने कभी सार्वजनिक रूप से इस रिश्ते को नहीं कबूला और कुछ साल के रिलेशनशिप के बाद वह अपनी पत्नी के पास वापस लौट गए.

अपने जमाने की मशहूर अभिनेत्री नगमा हिंदी समेत कई भाषाओं की फिल्मों में काम कर चुकी हैं. वह भोजपुरी फिल्मों की भी जानी-मानी अभिनेत्री हैं. इन दिनों वे राजनीति में सक्रिय हैं. नगमा का जन्म एक मुसलमान मां और हिंदू पिता के घर क्रिसमस के दिन 25 दिसंबर, 1974 को हुआ था. उनका असली नाम नंदिता अरविंद मोरारजी है. वह मशहूर दिवंगत व्यापारी अरविंद मोरारजी की बेटी हैं. उनकी मां महाराष्ट्र के कोंकण क्षेत्र की रहने वाली हैं. वे स्वतंत्रता सेनानी काजी परिवार से हैं और उनका असली नाम शमा काजी था, लेकिन वह अब सीमा नाम से जानी जाती हैं.

नगमा के माता-पिता के बीच कुछ पारिवारिक समस्याओं के कारण तलाक हो गया. इसके बाद उनकी मां ने मोरारजी से अलग होकर फिल्म निर्माता चंदर सदाना से शादी की, जिनसे उनकी दो और बेटियां हुईं- ज्योतिका (दक्षिण की अभिनेत्री) और राधिका. राधिका तमिल फिल्मों की अभिनेत्री हैं और उनका एक बेटा है सूरज. नगमा के पिता ने बाद में दूसरी शादी की थी, इसलिए नगमा के दो सौतेले भाई हैं- धनराज और युवराज.

नगमा के पिता अरविंद मोरारजी का 1 जनवरी, 2006 को निधन हो गया. वह अपने पिता के बेहद करीब थीं. अभिनेत्री नगमा ने भले ही कई भाषाओं की फिल्मों में काम किया हो, लेकिन उनका फिल्मी करियर बॉलीवुड से शुरू हुआ.

वर्ष 1990 में फिल्म बागी से उनका करियर शुरू हुआ था. इसमें उनके साथ सलमान खान थे. यह फिल्म उस साल की सबसे ज्यादा कमाई करने वाली फिल्मों में 7वें नंबर पर थी. बॉलीवुड में पहली हिट के बावजूद नगमा ने साउथ फिल्म उद्योग का रुख किया. नगमा का बॉलीवुड करियर अच्छा रहा. यहां उन्होंने कई सफल फिल्में दीं, जिनमें बागी (1990), यलगार (1992), सुहाग (1994), लाल बादशाह (1999), कुंवारा (2000), अब तुम्हारे हवाले वतन साथियों (2004) शामिल हैं.

उन्होंने कई भोजपुरी फिल्मों में काम किया, जो सुपरहिट रहीं. उन्हें फिल्म *दूल्हा मिलल दिलदार* के लिए भोजपुरी फिल्म अवॉर्ड्स में सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार मिला. नगमा और भोजपुरी सुपरस्टार रवि किशन ने एक साथ कई फिल्में कीं. इसी बीच दोनों के संबंधों को लेकर चर्चा होने लगी, लेकिन बाद में दोनों अलग हो गए. हालांकि रवि किशन पहले से ही शादीशुदा थे, लेकिन दोनों ने कभी इस बात को स्वीकार नहीं किया.

फिल्मों के अलावा, नगमा सबसे ज्यादा क्रिकेटर सौरव गांगुली से अफेयर को लेकर सुर्खियों में रहीं. उन्होंने तो सौरव के प्रति अपना प्यार जाहिर भी कर दिया था, लेकिन गांगुली ने कभी सार्वजनिक रूप से इस रिश्ते को नहीं कबूला और कुछ साल के रिलेशनशिप के बाद वह अपनी पत्नी के पास वापस लौट गए.

गांगुली के अलावा, भोजपुरी अभिनेता रवि किशन से भी नगमा का नाम जुड़ा. हालांकि, अब तक उन्होंने शादी नहीं की है. इन दिनों वह फिल्मों से दूर कांग्रेस के नेता के तौर पर राजनीति में किस्मत आजमा रही हैं. नगमा कांग्रेस की सदस्य हैं और वर्ष 2014 के चुनाव में उन्होंने मेरठ से चुनाव लड़ा था. चुनाव प्रचार के दौरान कांग्रेस एमएलए गजराज सिंह ने जनता के बीच उनका हाथ पकड़ लिया था और उन्हें किस करने की कोशिश की थी. इस मामले ने काफी तूल पकड़ा था, सोशल साइट पर तस्वीरें भी साझा की गईं. इस घटना के एक सप्ताह बाद ही नगमा ने एक जनसभा के दौरान एक शख्स को थप्पड़ जड़ दिया था. नगमा का कहना है कि उस शख्स ने उनके साथ बदतमीजी की, इसी के चलते नगमा ने सबके सामने उसे तमाचा जड़ दिया था.

वर्ष 2007 में आंध्र प्रदेश से राज्यसभा सीट के लिए कांग्रेस पार्टी की एक मुखर समर्थक के रूप में नगमा के लिए सिफारिश की गई थी. अप्रैल 2004 के चुनाव के दौरान वह आंध्र प्रदेश में कांग्रेस पार्टी की प्रमुख स्टार प्रचारक भी रही हैं.■

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com